शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर
महाराष्ट्र

दूर शिक्षण केंद्र

भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा

(शैक्षिक वर्ष 2015-16 से)

बी. ए. भाग–3 हिंदी

सत्र–5 : पेपर 11

युनिट – 1

1) भाषा की परिभाषाएँ।
2) भाषा की विशेषताएँ।
3) भाषा की उत्पत्ति एवं तत्संबंधी विविध वाद।

(दैवी उत्पत्ति वाद, धातु सिद्धांत, अनुकरण सिद्धांत, संपर्क सिद्धांत तथा समन्वित (समन्वय) सिद्धांत)

1.1 उद्देश्य।

1.2 प्रस्तावना।

1.3 विषय विवेचन।

1.3.1 भाषा की परिभाषाएँ।

1.3.2 भाषा की विशेषताएँ।

1.3.3 भाषा की उत्पात्ति एवं तत्संबंधी विविध वाद।

1.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न।

1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ।

1.6 स्वयं अध्ययन के प्रश्नों के उत्तर।

1.7 सारांश।

1.8 स्वाध्याय।

1.9 क्षेत्रीय कार्य।

1.10 अतिरिक्त अध्ययन।

1.1 उद्देश्य :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. भाषा के व्यापक तथा सीमित अर्थ से परिचित होंगे।
2. भाषा की भारतीय और पाश्चात्य परिभाषाओं से परिचित होंगे।
3. भाषा विज्ञान की दृष्टि से भाषा की सार्थक परिभाषा को जान सकेंगे।
4. भाषा के स्वरूप को समझ सकेंगे।

5. भाषा की विशेषताओं से परिचित होंगे।

6 भाषा की उत्पत्ति संबंधी विविध सिद्धांतों से परिचित हो जाएँगे।

1.2 प्रस्तावना :

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर वह परस्पर विचार-विनिमय करना चाहता है। आत्माभिव्यक्ति की यह इच्छा मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है। अपनी बात जहाँ वह दूसरों से कहना चाहता है, वहीं दूसरों के विचारों को ग्रहण भी करता है। अर्थात जिस प्रकार मनुष्य अपने विचार दूसरों को सुनाना चाहता है, उसी प्रकार दूसरों के विचार सुनना भी चाहता है। आत्माभिव्यक्ति की इस इच्छा (Desire of self expresion) ने भाषा को जन्म दिया है। मनुष्य के विचार-विनिमय के अनेक साधनों में 'भाषा' एक महत्त्वपूर्ण साधन है। भाषा के व्यापक एवं सीमित अर्थ कौनसे हैं ? भाषा की कौनसी महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं? कौन कौनसे विद्वानों ने भाषा को परिभाषित एवं परिभाषाबद्ध करने की कोशिश की है? भाषा विज्ञान की दृष्टिसे भाषा की कौनसी परिभाषा है ? तथा भाषा की सबसे व्यापक परिभाषा कौनसी है? भाषा की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ कौनसी हैं ? भाषा की उत्पत्ति कैसी हुई तथा उससे संबंधीत कौन-कौनसे सिद्धांत प्रचलित हैं? आदि प्रश्नों के संदर्भ में हम प्रस्तुत इकाई में अध्ययन करेंगे।

1.3 विषय विवेचन :

अब हम क्रमश: भाषा का अर्थ, भाषा की परिभाषाएँ भाषा की विशेषताएँ एवं भाषा उत्पत्ति संबंधी सिद्धांतों का विवेचन करेंगे।

1.3.1 भाषा की परिभाषाएँ :

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज के लोगों के साथ उसे सर्वदा ही विचार-विनिमय करना पड़ता है। कभी वह शब्दों या वाक्यों द्वारा अपने आपको (अपने भावों को) प्रकट करता है तो कभी सिर हिलाने से उसका काम चल जाता है। समाज के उच्च और शिक्षित वर्ग में लोगों को निमंत्रित करने के लिए निमंत्रण पत्र छपवाये जाते हैं, तो देहात के अनपढ़ और निम्नवर्ग में निमंत्रण के लिए हल्दी, सुपारी या इलायंची बाँट दी जाती है। रेलवे-गार्ड और रेल-चालक का विचारविनिमय झंडियों से होता है, तो बिहारी जैसे कवियों के पात्र 'भरे भवन में नैनों' से संकेत करते हैं। चोर अंधेरे में एक-दूसरे का हाथ पकड़कर, छूकर या दबाकर अपनी बातों को प्रकट करते हैं। इसी तरह हाथ से संकेत, करतल-ध्वनि (तालियाँ बजाना) आँख टेढ़ी करना या मारना या बंद करना, खाँसना, मुँह बिचकाना, तथा गहरी साँस लेना आदि अनेक प्रकार के साधनों से हमारे विचार-विनिमय का काम चलता है। ऐसे ही; यदि पहले से निश्चित कर लिया जाए तो, स्वाद या गंध द्वारा तथा विशेष कृति से भी अपनी बात कही जा सकती है। उदा. यदि 'मैं कॉफी पिलाऊँ' तो, समझ जाना कि समय है, काम करूँगा। किंतु यदि 'चाय पिलाऊँ' तो समझ जाना कि मेरे पास समय नहीं है, मैं काम नहीं करूँगा। या यदि मेरे कमरे में गुलाब की अगरबत्ती जलती मिले तो समझना, कि तुम्हारा काम हो गया है, किंतु यदि चंदन की अगरबत्ती जलती मिले तो समझ जाना कि काम नहीं हुआ है। इस

तरह अपने पाँचों ज्ञानेंद्रियों द्वारा मनुष्य विचार विनिमय करता है, तथापि अपने भावों एवं विचारों को व्यक्त करने वाले पाँचों ज्ञान-इंद्रियों में से गंध-इंद्रिय और स्वाद-इंद्रिय का प्रयोग प्राय: नहीं होता। स्पर्श-इंद्रिय का भी प्रयोग कम ही होता है। इससे अधिक प्रयोग आँख का होता है, जैसे रेल का सिग्नल, रेलवे गाडी को हरी या लाल झंडी दिखाकर गाडी के चलने या रुकने का संकेत देना आदि। किंतु इन सभी में सबसे अधिक प्रयोग कर्ण-इंद्रिय का होता है। अपनी सामान्य बातचीत में हम इसी का प्रयोग करते हैं। वक्ता बोलता है और श्रोता सुनकर विचार या भाव को ग्रहण करता है। वस्तुत: विचार विनिमय के ये सभी साधन 'भाषा' हैं।

परंतु यह 'भाषा' शब्द अति व्यापक अर्थ में प्रयुक्त है। भाषाविज्ञान में भाषा का इतना व्यापक रूप अभिप्रेत नहीं है। भाषाविज्ञान में उसे सीमिंत अर्थ में ही प्रयुक्त किया जाता है। अत: भाषा की परिभाषा करने से पहले उसके इन दोनों अर्थों को समझ लेना आवश्यक है।

1) 'भाषा' का व्यापक अर्थ :

व्यापक अर्थ में 'भाषा' शब्द उन समस्त अभिव्यक्तियों का बोधक है, जिनसे एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपनी इच्छा, भावना, उत्तेजना या आवेश एवं प्रतिक्रिया आदि प्रकट करता है। इसके अंतर्गत शारीरिक चेष्टाएँ, संकेत, विविध प्रकार की झंडियाँ, पुलिस की सीटी, स्काउट के 'संकेत', चोर डाकुओं की सांकेतिक अभिव्यक्ति, बच्चों के खेल व तमाशे के हेतु निर्धारित संकेत; घुमाव, ऊँचाई नीचाई, पुल, पाठशाला, रेल्वे फाटक, आदि के होने का बोध कराने यात्रियों के लिए रास्ते पर दिए गए संकेत; प्रकृति से प्राप्त मौन निमंत्रण आदि न जाने कितने ही संकेत समाविष्ट हो जाते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि, भाषा के व्यापक अर्थ में वे सभी माध्यम आ जाएँगे जिनके द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है। इन माध्यमों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है - 1) स्पर्श ग्राह्य 2) नेत्र-ग्राह्य तथा 3) श्रवण-ग्राह्य।

1) **स्पर्श-ग्राह्य :** इसके अंतर्गत वे साधन आते हैं जिनके द्वारा मनुष्य विचार-विनिमय करते समय स्पर्श का सहारा लेता है, जैसे; पुलिस का खतरा होने पर एक चोर दूसरे का हाथ दबाकर उसे बिना बोले ही उस खतरे का संकेत देता है। इस प्रकार स्पर्श से वे आपस में विचार-विनिमय कर लेते हैं।

2) **नेत्र-ग्राह्य :** इस वर्ग के अंतर्गत वे साधन आते हैं; जिनके द्वारा विचार-विनिमय करते समय मनुष्य संकेतों का सहारा लेता है। इन संकेतों के द्वारा एक मनुष्य दूसरे तक अपनी बात पहुँचा देता है। चूँकि, दूसरा इन संकेतों को अपने नेत्रों से ग्रहण करता है, अत: इसको नेत्र-ग्राह्य कहा गया है। स्काऊटों का परस्पर झंडियों के द्वारा विचार-विनिमय करना अथवा रेलवे-गार्ड का हरी, लाल झंडी हिलाकर गाडी के चलने व रूकने का संकेत देना आदि, विचार-विनिमय के नेत्र-ग्राह्य साधन हैं।

3) **श्रवण-ग्राह्य :** श्रवण-ग्राह्य वर्ग के अंतर्गत वे समस्त ध्वनियाँ आ जाती हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को व्यक्त करता है। चुटकी बजाकर किसी को बुलाना या डाक-घर के तार बाबू को 'गिर-

गिट' ध्वनि के द्‌वारा संकेत को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजना, विचार-विनिमय के श्रवण-ग्राह्य साधन हैं।

उपर्युक्त बातों पर विचार करते हुए भाषा की व्यापक परिभाषा इस प्रकार हो सकती है -

(1) 'भाषा' शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से बना है। 'भाष्' धातु का अर्थ है - 'बोलना' या 'कहना'। अर्थात भाषा वह है, जिसे बोला जाए। बोलते तो संसार के सभी प्राणी हैं। प्रत्येक जिवधारी; गाय-बंदर, कुत्ता, बिल्ली, चिड़िया आदि परस्पर विचारों एवं भावों के आदान-प्रदान हेतु किसी न किसी भाषा का प्रयोग करते हैं, लेकिन हम उनको विचार-विनिमय की भाषा नहीं कह सकते, क्योंकि उनकी भाषा केवल सांकेतिक होती है, जब कि मानव की भाषा का स्वरूप केवल सांकेतिक न होकर लिखित भी है।

(2) अपने व्यापकतम रूप से ''भाषा वह साधन है, जिस के माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।'' लेकिन भाषा विज्ञान की दृष्टि से भाषा का इतना विस्तृत अर्थ नहीं हैं। उसमें हम इन सभी साधनों को नहीं लेते, जिनके द्‌वारा विचारों को व्यक्त करते हैं एवं जिनके द्‌वारा सोचते हैं।

'भाषा' का सीमित अर्थ :

भावाभिव्यक्ति के सभी साधनों को भाषा मानने से उसके अर्थ में अतिव्याप्ति दोष की निर्मिती हो जाती है, जो भाषा के वैज्ञानिक अर्थ की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। वस्तुत: भाषा का अपना एक सीमित अर्थ है, जो उसको वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करता है।

'भाषा' शब्द को हम संकीर्ण अथवा संकुचित अर्थ में भी प्रयुक्त करते हैं। शास्त्रीय दृष्टि से 'भाषा' पर विचार करते समय हम उन सब संकेतों और संकेत जन्य अभिव्यक्तियों को ग्रहण नहीं करते, जो मनुष्य की वाग्यंद्रियों से न निकली हो। भाषा विज्ञान में 'भाषा' शब्द से यही 'संकीर्ण' या शास्त्रीय अर्थ हम ग्रहण करते हैं।

सीमित अर्थ के अनुरुप भाषा की वैज्ञानिक परिभाषा बाँधने से पहले उसमें निहित मूलभूत बातों का विचार होना आवश्यक है, ये निम्नप्रकार हैं -

1. भाषा विचार-विनिमय का साधन है।
2. वह मनुष्य के उच्चारण अवयवों से निसृत ध्वनिप्रतीकों की व्यवस्था होती है।
3. यह ध्वनिप्रतीक सार्थक होते हैं। और वे विश्लेषण करने योग्य होते हैं।
4. ये ध्वनिप्रतीक यादृच्छिक (माने हुए) होते हैं।
5. एक भाषा का प्रयोग समाज के एक वर्ग-विशेष में होता है।

भाषा के वैज्ञानिक अर्थ को स्पष्ट करने का प्रयत्न भारतीय तथा पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों ने किया है। उनकी परिभाषाओं के आधार पर भाषा का वैज्ञानिक स्वरूप स्पष्ट हो जाता है।

भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषा की परिभाषा :

भाषा विज्ञान की दृष्टि से भाषा उसे कहते हैं, ''जो बोली और सुनी जाती है और बोलना भी पशु-पक्षियों का नहीं, गूँगे मनुष्यों का भी नहीं, केवल बोल सकने वाले मनुष्यों का ।''

भारतीय विद्वानों द्वारा दी गई भाषा की परिभाषाएँ :

1) **पं. कामता प्रसाद गुरु :**

''भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली-भाँति प्रकट कर सकता है। और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।''

2) **महर्षि पतंजलि :**

प्रसिद्ध वैयाकरण 'पंतजलिने' अपने 'महाभाष्य' में भाषा को परिभाषित करते हुए लिखा है - 'व्यक्ता वाची वर्णा येषां त इमे व्यक्तवाच:।'

अर्थात्, ''जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है, उसे भाषा कहते हैं।''

3) **डॉ. कपिल देव द्विवेदी :**

''व्यक्तवाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती है, उसे भाषा कहते हैं।''

4) **डॉ. मंगलदेव शास्त्री :**

''भाषा मनुष्य की उस चेष्टा या व्यापार को कहते हैं, जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से उच्चारण किए गए वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।''

5) **डॉ. श्याम सुंदर दास :**

''मनुष्य और मनुष्यों के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त है, उसे भाषा कहते हैं।''

6) **आचार्य किशोरीदास बाजपेयी :**

''विभिन्न अर्थों में सांकेतिक शब्द समूह ही भाषा है, जिसके द्वारा हम अपने मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं।''

7) **डॉ. देवन्द्रनाथ शर्मा :**

''जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग करते हैं उस यादृच्छिक रूढ-ध्वनि संकेत प्रणाली को भाषा कहते हैं।'' इसी परिभाषा को और भी अधिक संक्षिप्त करते हुए डॉ. शर्मा लिखते हैं ''उच्चारित ध्वनि-संकेतों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति को भाषा कहते हैं।''

8) **डॉ. बाबूराम सक्सेना :**

''जिन ध्वनि चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसे भाषा कहते हैं।''

9) **डॉ. पी. डी. गुणे :**

ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा हृदयगत भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।

10) **सुकुमार सेन :**

'अर्थवान कण्ठ से निःसृत (निकलनेवाली) ध्वनि-समष्टि ही भाषा है।''

11) **डॉ. राजनारायण मौर्य :**

''भाषा मानव - वाक् इंद्रियों से निःसृत सार्थक तथा यादृच्छिक ध्वनि समूहों की वह व्यवस्था है, जिससे एक मानव समुदाय परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करता है।''

12) **डॉ. भोलानाथ तिवारी :**

''भाषा उच्चारणावयवों से उच्चारित यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज-विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।''

- **पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई भाषा की परिभाषाएँ :**

1) **प्लेटो :**

प्लेटों ने 'सोफिस्ट' में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि, ''विचार और भाषा में थोडा ही अंतर है, 'विचार' आत्मा की 'मूक' या 'अध्वन्यात्मक' बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है, तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।

2) **स्वीट :**

''ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।''

3) **वेन्द्रिए :**

भाषा एक तरह का संकेत है। संकेत से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपने विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं, जैसे-नेत्रग्राह्य, कर्णग्राह्य और स्पर्शग्राह्य। भाषा की दृष्टि से कर्णग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ हैं।''

4) **क्रोचे :**

"Language is articulate, limited, organised sound, employed in expression."

अर्थात, ''अभिव्यंजना के लिए प्रयुक्त स्पष्ट, सीमित तथा सुसंगठित ध्वनि को भाषा कहते हैं।''

5) **ए. एच. कार्डिनर** (A. H. Cardiner) :

"The Common defination of speech is the use of articulate sound - symbols for the expression of thought."

अर्थात "विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यवहृत (व्यवहारा में प्रयुक्त) व्यक्त और स्पष्ट ध्वनि संकेतों को भाषा कहते हैं।"

6) **ब्लॉक और ट्रेगर :**

"A Language is a system of arbitrary vocal - symbols by means of which a society group co-operates."

अर्थात, "भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिससे एक सामाजिक समूह परस्पर सहयोग करता है।"

7) **हम्बोल्ट :**

"उच्चारित ध्वनि को भाषाभिव्यक्ति के लिए उपयोगी बनाने की चिरन्तन चेष्टा का फल है, भाषा। यह श्रवणेन्द्रीय पथ से मानव मन की अभिव्यक्ति है।"

8) **स्त्रुत्वाँ :**

"A language is system of arbitrary vocal symbols by means of which members of a social group co-operate and interact."

अर्थात, "भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेतों की वह पद्धति है, जिसके द्वारा मानव समुदाय परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।"

9) **एडवर्ड सपीर :**

"Language is a purely human and non-instinctive method of communicating ideas, emotions and desires by means of voluntarily produced symbols."

अर्थात, "भाषा वास्तव में एक मानवीय और अस्वाभाविक पद्धति है, जिसकी सहायता से इच्छानुसार भावों, विचारों तथा इच्छाओं को प्रेषणीय बनाने के लिए श्रोतग्राह्य प्रतीकों की रचना की जाती है। ये प्रतीक मनुष्य के उच्चारणावयवों से निःसृत होते हैं।"

10) **इनसाइक्लोपिड़िया ब्रिटानिका :**

Language may be defined as an arbitrary system of volcal symbols by means of which human-beings as members of a social group and participants in culture interact and communicate.:

अर्थात, "भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा मानव समुदाय के एक विशेष सामाजिक, सांस्कृतिक परंपरा के लोग विचारों का आदान-प्रदान करके अपना काम चलाते हैं।"

11) **भाषा विज्ञान कोश :**

"The language is a system of communication by sound through the organs of speech and hearing among human being of certain group or community using vocal symols posessing arbitrary conventionals meanings."

अर्थात, ''मानवों के वर्ग-विशेष में पारस्परिक व्यवहार के लिए प्रयुक्त उन व्यक्त ध्वनि-संकेतों को भाषा कहते हैं, जिनका अर्थ पूर्व निर्धारित एवं परंपरागत होता है, तथा जिनका आदान-प्रदान जिह्वा और कान के द्वारा होता है।''

12) **जे. वैन्ड्रीज :**

''भाषा प्रतीकात्मक चिह्नों की ऐसी पद्धति है, जो मानव समाज के मध्य वैचारिक आदान-प्रदान का माध्यम बन सकती है। विभिन्न इंद्रियों के द्वारा ग्राह्य होने के कारण भाषा इन प्रतीकों की रचना कही जा सकती है।''

उपर्युक्त भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों के भाषा विषयक मतों का अवलोकन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि कोई भी मत भाषा के संपूर्ण स्वरूप को स्पष्ट करने में पूर्ण रूप से सफल नहीं है। इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि, भाषा का आधार ध्वनी-प्रतीक हैं। ध्वनि उच्चारण अवयवों से उच्चारित होती हैं। भाषा में एक व्यवस्था होती है। एक भाषा का क्षेत्र एक समाज विशेष ही होता है। भाषा का कार्य वक्ता के भाव या विचारों को श्रोता तक पहुँचाना है। इन्ही बातों के आधार पर भाषा के संदर्भ में संक्षेप में कहा जा सकता है कि, 'भाषा, उच्चारण - अंगों से (उच्चारण-अवयवों से) निःसृत विश्लेषण योग्य,सार्थक, यादृच्छिक, ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से समाज के एक वर्ग-विशेष के लोग परस्पर विचार-विनिमय करते हैं।'' यही भाषा की सुयोग्य परिभाषा हो सकती है।

1.3.2 भाषा की विशेषताएँ :

'भाषा' शब्द का अर्थ, स्वरूप और भाषा की परिभाषाओं को समझने के पश्चात् उसकी विशेषताओं को समझना कठिन नहीं होगा। भाषा के लक्षणों को ही दूसरे शब्दों में 'भाषा की विशेषताएँ' या भाषा की प्रवृतियाँ कहा जाता है, जिनको स्पष्ट करने से अपने आप ''भाषा की प्रकृति'' स्पष्ट हो जाती है। भाषा के सहज स्वभाव को 'प्रकृति' कहते हैं और उसमें निहित गुणों को प्रवृत्तियाँ। संसार में हजारों विभिन्न भाषाएँ हैं, जिनकी अपनी-अपनी स्वतंत्र विशेषताएँ होती हैं। परंतु कुछ तत्त्व ऐसे भी होते हैं, जो सभी भाषाओं में समान रूप से पाए जाते हैं। व्याकरण के नियम किसी एक भाषा-विशेष को लागू होते हैं, किंतु वे तत्त्व-जिन्हें हम भाषा की विशेषताएँ कहते हैं - सभी भाषाओं पर लागू होते हैं। इन विशेषताओं का संबंध केवल मनुष्य की भाषा से ही है। ये विशेषताएँ किसी एक भाषा पर लागू न होकर सभी भाषाओं पर लागू होती हैं। यहाँ हम उन विशेषताओं का विवेचन करेंगे-

1) भाषा पैतृक संपत्ति एवं बपौती नहीं है।

2) भाषा अर्जित संपत्ति है।

3) भाषा आद्यंत सामाजिक वस्तु है।

4) भाषा चिर परिवर्तनशील है।

5) भाषा का अर्जन अनुकरण द्वारा किया जाता है।

6) भाषा का एक स्थिर और मानक रूप होता है।

7) भाषा का कोई अंतिम स्वरूप नहीं है।

8) भाषा परंपरागत वस्तु है।

9) भाषा सामाजिक दृष्टि से स्तरित वस्तु है।

10) प्रत्येक भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है।

11) प्रत्येक भाषा की एक ऐतिहासिक सीमा होती है।

12) प्रत्येक भाषा की अपनी अलग संरचना होती है।

13) भाषा की धारा स्वभावत: कठिनता से सरलता की ओर जाती है।

14) भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर जाती है।

15) भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर बढ़ती है।

16) भाषा एक सहज व नैसर्गिक प्रक्रिया है।

1) **भाषा पैतृक संपत्ति एवं बपौती नहीं है –**

पिता से पुत्र को मिलनेवाली संपत्ति को पैतृक संपत्ति तथा बाप-दादा से अपने आप मिलनेवाली संपत्ति को बपौती कहा जाता है। भाषा परंपरागत होते हुए भी पैतृक संपत्ति एवं बपौती नहीं है। जिस प्रकार एक पुत्र अपनी पैतृक संपत्ति का उत्तराधिकारी हो जाता है, उस प्रकार भाषा का उत्तराधिकारी नहीं हो पाता, क्योंकि भाषा परंपरा द्वारा प्राप्त किंतु अर्जित वस्तु है। भाषा मनुष्य को पैतृक संपत्ति के रूप में जन्म से ही प्राप्त नहीं होती। इसलिए मनुष्य को अनुकरण और अभ्यास द्वारा भाषा सीखनी पड़ती है।

उदा, यदि किसी अंग्रेज बच्चे का लालन-पालन हिंदी भाषी माता-पिता करें तो बच्चा हिंदी भाषी होगा, क्योंकि वह जन्म से कोई भाषा नहीं जानता है। अथवा संस्कृत के किसी प्रकाण्ड पंडित का पुत्र संस्कृत से नितांत अपरिचित भी हो सकता है। हिंदी के प्रोफेसर के लड़के वैसी हिंदी नहीं भी जानते। इसका कारण यह है कि, प्रत्येक भाषा का प्रयत्नपूर्वक अर्जन करना पड़ता है। यहाँ व्यक्ति के अपने प्रयत्न ही महत्त्वपूर्ण हैं। भाषा का ज्ञान विरासत में नहीं मिलता। परंपरा-प्राप्त होते हुए भी भाषा वंशानुगत नहीं है। भाषा सामाजिक परंपरा से प्राप्त होती है, कुल या वंश परंपरा से नहीं।

बच्चा बड़ों का अनुकरण करके ही भाषा सीखता है। अपने से बड़ों को देखकर बच्चा उनका अनुकरण करता है। उनके द्‌वारा बार-बार प्रयुक्त शब्दों को पकड़ता है, उन्हें बोलने की कोशिश करता है अत: भाषा पैतृक संपत्ति एवं बपौती नहीं है।

2) भाषा अर्जित संपत्ति है –

भाषा मनुष्य की अर्जित संपत्ति है, ईश्वर की देन नहीं। भाषा बच्चों को अपने माता पिता से उत्तराधिकार में प्राप्त होती है, किंतु भाषा की यह संपत्ति अन्य मकान, जमीन आदि संपत्ति की तरह नहीं मिलती। मकान, जमीन आदि संपत्ति बच्चों को माँ-बाप द्‌वारा बिना प्रयास मिलती है, लेकिन भाषा अवगत करने के लिए उसे प्रयास करना पड़ता है। मातृभाषा माँ से बच्चे को अवश्य प्राप्त होती है, किंतु बच्चे को उसे सीखने के लिए प्रयत्न करने पड़ते हैं।

बच्चा नाक, कान आदि की तरह भाषा लेकर नहीं जन्मता। भाषा जन्मजात वस्तु नहीं है। बच्चे में अनुकरण की एक जन्मजात प्रवृत्ति होती है, जिसके कारण वह भाषा सीख सकता है। उसे अपने आस-पास के व्यवहार से भाषा सीखनी पड़ती है। अकेला शिशु निर्जन स्थान में रहकर भाषा नहीं सीख सकता। व्यवहार द्‌वारा ही वह ध्वनियों का ठीक उच्चारण, शब्दों का प्रयोग आदि सीख सकता है। समाज में लगातार भाषा सीखने की प्रक्रिया अनजाने में ही चलती रहती है। इस सीखने में अनुकरण ही प्रधान होता है। भाषा का अर्जन अनुकरण द्‌वारा होता है। 'शिशु' के समक्ष जब माँ 'दूध' कहती है तो वह सुनता है,और धीरे-धीरे उसे स्वयं कहने का प्रयास करता है। प्रसिद्‌ध युनानी दार्शनिक 'अरस्तु' कहते हैं कि 'अनुकरण मनुष्य का समसे बड़ा गुण है। वह भाषा सीखने में भी उसी गुण का उपयोग करता है।''

व्याकरण, शब्दकोश, शिक्षक आदि के द्‌वारा बच्चे की भाषा को स्थिर रूप प्राप्त होता है। अत: भाषा सामाजिक व्यवहार द्‌वारा अर्जित हुई वस्तु है।

3) भाषा आद्‌यंत सामाजिक वस्तु है –

सामाजिक व्यवहार के लिए भाषा ही सब से बड़ा साधन है। सामाजिकता और भाषा दोनों अन्योन्याश्रित हैं। भाषा की उत्पत्ति समाज द्‌वारा होती है। इसका विकास भी समाज में ही होता है। उसका उपयोग ही समाज के लिए ही होता है। भाषा पूर्णत: आदि से अंत तक समाज से संबंधित है, इसलिए उसे आद्‌यंत सामाजिक वस्तु कहा जाता है। बच्चा जब पैदा होता है, तो उसके बाद वह परिवार से भाषा सीखता है। उसे भाषा सिखाने का प्रारंभ उसकी माँ से होता है, लेकिन आगे चलकर सारा समाज उसे भाषा सिखाता है। माँ बच्चों को जो भाषा सिखाती है, वह समाज की ही संपत्ति होती है, जो माँ ने भी अपने समाज से प्राप्त की थी। बच्चा इसलिए भाषा सीखता है, कि उसे समाज के लोगों के साथ व्यवहार करना होता है। वस्तुत: सामाजिकता के निर्वाह के लिए ही भाषा का निर्माण हुआ है। समाज को छोडकर भाषा की कल्पना भी नहीं की जा सकती । भाषा का उद्‌भव और विकास मनुष्य की सामाजिकता के फल स्वरूप हुआ है। पारस्पारिक सहयोग संपर्क और विचार-विनिमय की आकांक्षा ने ही भाषा का विकास किया है। 'भाषा

व्यक्ति और समाज को जोड़नेवाली महत्त्वपूर्ण कड़ी है। मनुष्य समाज में रहकर ही भाषा का अर्जन, संवर्धन, एवं विकास करता है, इसलिए भाषा पूर्ण रूप से सामाजिक वस्तु है।

4) **भाषा चिरपरिवर्तनशील है –**

चिर परिवर्तनशीलता भाषा का प्रधान गुण है। भाषा सदैव बदलती रहती है। भाषा का कोई रूप स्थिर या अंतिम नहीं होता है, क्योंकि आज से कुछ हजार या कुछ सौ वर्ष पहले भाषा के जिस रूप का प्रयोग होता था उसका प्रयोग अब नहीं होता, बल्कि उसमें परिवर्तन होता है। उदा, दुग्ध से दूध, पृष्ठ से पीठ, मेघ से मेह ये शब्द परिवर्तन के ही परिणाम है। उसी प्रकार संस्कृत का 'हस्त' शब्द प्राकृत में 'हात' होकर हिंदी में 'हाथ' हो गया है। संस्कृत का 'साहस' शब्द हत्या, व्यभिचार आदि के अर्थ में प्रयुक्त होता था। हिंदी में उसका अर्थ अब 'हिम्मत' हो गया है।

यह परिवर्तन भाषा के सभी अंगों–ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थ–में होता है। शब्दों में कुछ नई ध्वनियाँ आकर जुड़ती हैं, कुछ लुप्त हो जाती हैं, या कुछ में 'विपर्यय' हो जाता है। पद रचना में पुराने प्रत्ययों के स्थान पर ऐसे कुछ नए प्रत्यय आ जाते हैं कि, पहचानना भी कठिन होता है। वाक्यों में भी शब्दों का क्रम बदल जाता है। शब्दों के अर्थ में परिवर्तन बड़ी सहजता से और शीघ्रता से होता है, क्योंकि नए-नए अर्थ प्रकट करने के लिए हम रोज शब्दों को ढूँढ़ते रहते हैं। ऐतिहासिक कालक्रम के अलावा यह परिवर्तन स्थान के आधार पर भी होता रहता है। एक स्थान की भाषा दूसरे स्थान से भिन्न होती है। इस संदर्भ में एक कहावत है – 'चार कोस पर बदले पानी, आठ कोस पर बानी।' इस परिवर्तन के कारण ही एक ही भाषा परिवार की भाषा सिंधी, हिंदी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला, असमिया आदि अनेक भाषाओं में बदल गई तथा प्रत्येक भाषा की दर्जनों बोलियाँ और उपबोलियाँ बन गई।

अनेक बार वैयाकरणों ने भाषा को व्याकरण के नियमों से बाँधने का प्रयास किया लेकिन भाषा का नियंत्रित रूप प्रयोग से दूर पड़ गया और व्यावहारिक भाषा आवश्यक परिवर्तन करती हुई गतिशील बनती रही।

5) **भाषा का अर्जन अनुकरण द्‌वारा किया जाता है –**

प्रसिद्‌ध यूनानी दार्शनिक अरस्तु के शब्दों में, 'अनुकरण मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है। मनुष्य भाषा के सीखने में भी उसी गुण का उपयोग करता है।' अपने परिवार तथा समाज में जो भाषा बोली जाती है वही भाषा मनुष्य अपने बचपन से सुनता रहता है, और अपने मुख से अनुकरण के रूप में वही भाषा बोलने लगता है। इसका अर्थ यह है कि अपने परिवार तथा समाज में जो भाषा बोली जाती है, बालक उसे अपने कानों से सुनता है, मन से समझता है और अपने उच्चारण अवयवों से उसका उच्चारण करने लगता है। प्रथमत: वह 'घोला-गाली', 'लाजा-लानी' बोलते हुए अपनी तोतली बोली में, बड़ों की भाषा का अनुकरण करने लगता है और आगे चलकर वह बड़ों के सही उच्चारण का सही अनुकरण कर के 'घोडा-गाडी, 'राजा-रानी' ऐसा सही उच्चारण करता है। इस प्रकार भाषा का अर्जन अनुकरण द्‌वारा किया जाता है।

6) **भाषा का एक स्थिर और मानक रूप होता है –**

भाषा में जहाँ परिवर्तन और विविधता की प्रवृत्ति होती है, वहीं स्थिरीकरण और एकता की भी। परिवर्तन की अनिवार्य प्रवृत्ति के कारण एक काल की भाषा दूसरे काल की भाषा से भिन्न होती है, किंतु यदि इस परिवर्तन पर नियंत्रण न हो तो, एक पिढ़ी की भाषा दूसरी पिढ़ी के लिए समझना कठिन हो जाता है। व्यक्ति–व्यक्ति की भाषा अलग अलग बन जाती है। अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण भाषा परिवर्तन चाहती है और व्याकरण उसे स्थिर रखना चाहता है। अत: एक विद्वान ने व्याकरण को भाषा का 'पुलिसमैन' कहा है।

अपने व्याकरण के आधार पर भाषा परिनिष्ठित बनी रहती है। इसी परिनिष्ठित भाषा के रूप को भाषा–भाषी 'आदर्श भाषा' मानते हैं, इसलिए उसे 'मानक भाषा' भी कहते हैं। इसी 'आदर्श भाषा' या 'मानक भाषा' को अंग्रेजी में 'Standard Language' कहते हैं। भाषा के इसी मानक रूप को प्राप्त करने के लिए, सभी व्यक्ति प्रयत्न करते हैं। व्याकरण आदि के द्वारा हम उसी मानक रूप तक पहुँचते हैं। व्याकरण हमें भाषा के मानक या स्थिर रूप से भिन्न प्रयोग की स्वीकृति नहीं देता। प्राकृतिक नियम से भाषा परिवर्तित होना चाहती है, लेकिन आदमी उसे रोकना चाहता है, आदमी के इस प्रयत्न से भाषा का परिवर्तन रूकता नहीं, किंतु उसकी गति धीमी अवश्य पड जाती है। आदमी का यही प्रयत्न भाषा को अपेक्षित स्थिरता प्रदान करता है, और साहित्य, व्याकरण, शिक्षा शासन आदि उसे मानक रूप देते हैं।

7) **भाषा का कोई अंतिम स्वरूप नहीं है –**

जो वस्तु बन–बनाकर पूर्ण हो जाती है, उसका अंतिम स्वरूप होता है पर भाषा ऐसी वस्तु नहीं है। वह कभी पूर्ण नहीं हो सकती अर्थात् यह कभी नहीं कहा जा सकता कि अमुक भाषा का यह अमुक रूप अंतिम है। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि यह केवल जीवित भाषा के बारे में कहा जा सकता है, मृत भाषा के बार में नहीं । भाषा की मृत्यु के समय का रूप तो अवश्य अंतिम ही उसका होता है, पर जीवित भाषा में यह बात नहीं है।

एक भाषा–समाज में जो भाषा परंपरागत तथा परिवर्तनशील होती है, वह कभी खंडित या अपरिवर्तित नहीं होती। वह भाषा सदैव गतिशील बनी रहती है। जिससे उसका प्रवाह अविचलित बना रहता है। भाषा अपनी प्रचलित स्थिति में कुछ परिवर्तित भी होती रहती है, जिसके परिणाम स्वरूप कभी उसका अंतिम स्वरूप नहीं होता। कबीर ने कहा है, 'भाषा बहता नीर।' जिस प्रकार 'नीर' याने 'पानी' भिन्न–भिन्न स्थितियों में से आगे बढ़ता रहता है, उसी प्रकार भाषा भी एक भाषा–समाज में प्रयुक्त होकर भिन्न–भिन्न अवस्थाओं में से आगे ही बढ़ती है।

अपवाद रूप में ''संस्कृत'' ही एक मात्र ऐसी भाषा है, जिसे पाणिनि के व्याकरण ने इतना स्थिर कर दिया है कि शताब्दियों की यात्रा में भी उस में कोई बहुत उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ है। कुछ भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि संस्कृत एक मृत भाषा है। अत: वह एक रूढिबद्ध ढाँचे में बँधकर रह गई है।

परंतु ऐसा मानना युक्ति संगत नहीं है। संस्कृत आज भी जीवित भाषा है। संस्कृत को छोड़कर संसार की सभी भाषाएँ दिन-प्रति-दिन परिवर्तित होती हैं। जहाँ भाषा में स्थिरता आती है, वहाँ भाषा मृत बन जाती है। परिवर्तन और अस्थैर्य ही भाषा के जीवन का द्योतक है।

8) **भाषा परंपरागत वस्तु है –**

भाषा एक सनातन (परंपानुसार आई) वस्तु है, जो हमें परंपरा से प्राप्त होती है। हम अपने परिवार में जो भाषा बोलते हैं वह हमें अपने माता-पिता से मिलती है, माता-पिता को दादा-दादी से और उन्हें अपनी पूर्ववर्ती पीढी से। यह प्रवास अनादिकाल से इसी प्रकार चला आ रहा है। समय के साथ भाषा बदलती रहती है, परंतु उसका प्रवास कभी खंडित नहीं होता। अर्थात भाषा परंपरा से चली आ रही है, व्यक्ति उसका अर्जन परंपरा और समाज से करता है। एक व्यक्ति उसमें परिवर्तन आदि तो कर सकता है, किंतु उसे उत्पन्न नहीं कर सकता। यदि कोई भाषा के जनक और जननी है तो वह है समाज और परंपरा। भाषा परंपरागत होने के कारण ही समाज को बार-बार किसी भाषा का निर्माण करने की आवश्यकता नहीं रहती। समाज के लोग परंपरा के रूप में प्रचलित भाषा को अपने बचपन से अनुकरण के द्वारा सीखते रहते हैं और उसी के माध्यम से अपने भावों-और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। इसलिए भाषा परंपरागत है।

9) **भाषा सामाजिक दृष्टि से स्तरित वस्तु है –**

किसी एक समाज के भिन्न-भिन्न स्तरों के भाषिक एक-सी भाषा का प्रयोग नहीं करते। उम्र की भिन्नता, बौद्धिक विकास की भिन्नता, शिक्षा-स्तर की भिन्नता, व्यवसाय की भिन्नता आदि के कारण यह भेद उत्पन्न होता है। बच्चे और बुढ़ो की भाषा में, शिक्षित और अशिक्षित की भाषा में स्तर-भेद हो ही जाएगा। शिक्षा, अर्थव्यवस्था, सांस्कृतिक स्तर-भेद, बौद्धिक स्तर-भेद, सामाजिक स्तर-भेद, व्यावसायिक स्तर-भेद के अनुसार भाषा में भी उतने ही भेद मिलते हैं। उदा, विद्वानों और अनपढ़ों की भाषा में अंतर होता है। भिन्न-भिन्न व्यवसाय करनेवालों की भाषा में भी परस्पर अंतर पाया जाता है।

विभिन्न जातियों, पंड़ितों, कायस्थ, चमार, जुलाहे, आदि के भाषा प्रयोग में भी अंतर दिखाई देता है। एक दार्शनिक की भाषा और एक मजदूर की भाषा में भी निश्चय ही भेद होता है। कोर्ट-कचहरी में प्रयुक्त भाषा और पुरोहित कर्म करने वालों की भाषा में भिन्नता स्पष्ट नजर आती है।

10) **प्रत्येक भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है –**

एक निश्चित भौगोलिक सीमा पर भाषा का रूप बदलता है इसलिए कहा जाता है – ''चार कोस पर बदले पानी, आठ कोस बानी'' अर्थात् आठ कोस पर बाणी याने भाषा बदलती है। सीमा के भीतर ही उस भाषा का अपना वास्तविक क्षेत्र होता है। उस सीमा के बाहर उसका स्वरूप थोडा या अधिक परिवर्तित हो जाता है, या उस सीमा के बाहर किसी दूसरी भाषा की सीमा पूर्णत: शुरू हो जाती है। उदा. बंगला नामक भूखंड की भाषा यदि बंगाली है तो पंजाब नामक भूखंड की भाषा पंजाबी है। इसी प्रकार अंग्रेजी, रूसी, चीनी आदि भाषाओं की भी अपनी-अपनी निर्धारित भौगोलिक सीमाएँ हैं।

11) प्रत्येक भाषा की एक ऐतिहासिक सीमा होती है –

प्रत्येक भाषा की एक ऐतिहासिक सीमा होती है। ऐतिहासिक भाषाविज्ञान प्रत्येक भाषा के इतिहास का अध्ययन करता है। प्रत्येक भाषा प्रारंभ में किसी रूप में थी, बाद में बदलकर किस रूप में आई, वह किस समय से किस समय तक प्रचलित रही, इन बातों पर 'ऐतिहासिक भाषाविज्ञान' में विचार होता है। इस दृष्टि से संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि आर्य भाषाओं का समय निर्धारित किया गया है।

12) प्रत्येक भाषा की अपनी अलग संरचना होती है –

किन्हीं भी दो भाषाओं का ढाँचा पूर्णतया एक नहीं होता है, अर्थात् प्रत्येक भाषा की अपनी अलग संरचना होती है। उसमें ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य या अर्थ आदि किसी भी एक स्तर पर या एक से अधिक स्तरों पर 'संरचना' या 'ढाँचे' में अंतर अवश्य होता है। यही अंतर उनकी अलग या स्वतंत्र सत्ता का कारण बनता है। भाषा की रचना ध्वनियों, शब्दों (पदों) द्वारा स्पष्ट होती है। संसार की सभी भाषाओं में द्वैध संरचना मिलती है – वाक्यात्मक तथा ध्वनि अक्रियात्मक। भाषा वैज्ञानिकों के मतानुसार यह द्वैध संरचना मानव भाषाओं की विश्वव्यापी विशेषता है।

प्रत्येक भाषा किसी एक समाज में प्रचलित रहती है। इसलिए भाषा-समाज द्वारा मान्य व्यवस्था के आधार पर प्रत्येक भाषा की अपनी अलग संरचना बनी रहती है। इस कारण से ही प्रत्येक भाषा एक दूसरी से अलग होती है; जैसे, हिंदी में शब्दों की रूप रचना के लिए पुल्लिंग और स्त्रीलिंग इन दोनों लिंगों को और एकवचन तथा बहुवचन इन दोनों वचनों को स्वीकार किया गया है, लेकिन संस्कृत भाषा में एक वचन, द्विवचन, बहुवचन इन तीनों वचनों को स्वीकार किया गया है, तो मराठी भाषा तथा गुजराती भाषा में पुल्लिग, स्त्रीलिंग, नपुसकलिंग इन तीनों लिंगों को स्वीकार किया गया है। इससे ज्ञात होता है कि प्रत्येक भाषा का संरचनात्मक ढ़ाँचा स्वतंत्र होता है और वह अपने-अपने व्याकरण पर आधारित होता है। व्याकरण ही निश्चित व्यवस्था के आधार पर भाषा के संरचनात्मक ढ़ाँचे को सुरक्षित रखता है।

13) भाषा की धारा स्वभावत: कठिनता से सरलता की ओर जाती है –

मनुष्य स्वभाव से ही सरलताप्रिय प्राणी है। वह हर क्षेत्र में श्रम और शक्ति की बचत करना चाहता है। मनुष्य की यह प्रवृत्ति भाषा के क्षेत्र में भी सक्रिय रहती है। (Economy of effort) प्रयत्न लाघव, मुख-सुख, श्रम की बचत या उच्चारण की सुविधा आदि के कारणों से ही भाषा में बहुत से परिवर्तन होते हैं। सभी भाषाओं के इतिहास से भाषा के कठिनता से सरलता की ओर जाने की बात स्पष्ट होती है। क्योंकि मनुष्य का यह जन्मजात स्वभाव है कि वह कम से कम प्रयास में अधिक लाभ उठाना चाहता हैं।

कुछ ध्वनि संयोग के कारण शब्द के उच्चारण में और कुछ क्लिष्ट नियमों के कारण भाषा की संरचना के स्वरूप में कठिनता बनी रहती है। तब स्वाभाविक रूप से कठिनता में परिवर्तन करके सरलता को स्थान देने का प्रयत्न होता है। इस कारण से यह ''चन्द्र, अग्नि, दुग्ध, क्षेत्र रात्र'' जैसे तत्सम शब्दों के कठिन उच्चारण को सरल बनाने के लिए हिंदी में ''चन्दर, आग, दूध, खेत, रात'' ये ध्वनि परिवर्तित रूप प्रचलित हुए हैं। इसी कम प्रयास के प्रयास में वह सत्येंद्र को सतेंद्र और फिर सतेन कहने लगता है और एक अवस्था

ऐसी आ जाती है, जब वह केवल 'सति' कहकर भी काम चलाना चाहता है। उसी प्रकार 'आभ्यंतर' का 'भीतर' और 'जयरामजी की' का 'जैरामजी की' बन जाना आदि इस बात के प्रमाण है।

साथ ही साथ विभिन्न शब्दों, रूपों के लिए संस्कृत व्याकरण के समान तीन वचन-प्रकारों और तीन लिंग-प्रकारों का तथा विभक्तियों के अनेक प्रत्ययों का स्वीकार करने के बदले हिंदी भाषा के व्याकरण ने पुल्लिंग-स्त्रीलिंग इन दो लिंगो, एकवचन-बहुवचन इन दो वचनों और विभक्ति के कुछ ही प्रत्ययों को स्वीकार किया है, जिससे हिंदी भाषा व्यवहारउपयोगी, सरल रूप धारण करने में सफल हुई है। इससे स्पष्ट है कि, भाषा कठिनता से सरलता की ओर बढ़ती है।

14) **भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर बढ़ती है –**

भाषा अपने आरंभिक रूप में स्थूल या अप्रौढ होती है। क्रमशः वह सूक्ष्मतर व प्रौढतर होती जाती है। मानव के विकास के साथ ही भाषा का विकास होता रहता है। मनुष्य जैसे-जैसे अपने हृदय के सूक्ष्म भावों और अपने मन के सूक्ष्म विचारों का भाषा के माध्यम से व्यक्त करने लगता है वैसे-वैसे भाषा सूक्ष्म और प्रौढ अर्थात विकसित होने लगती है। पहले 'तेल' का अर्थ 'तिल का रस' था जो कोल्हू से 'तिलों' को रगडकर अर्थात् तिलों को तकलीफ पहुँचाकर निकाला जाता था। इसी बात को ध्यान में रखकर अपने हृदय का 'क्रोध' यह सूक्ष्म भाव व्यक्त करने तथा धमकाने के सूक्ष्म विचार के लिए 'तेरा तेल निकालूँगा' ऐसा कहा जाने लगा। इससे ज्ञात होता है कि, भाषा अपने स्थूल और अप्रौढ़ (अविकसित) रूप के आधार पर ही सूक्ष्म भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए सूक्ष्म और प्रौढ़ (विकसित) बनती रहती है।

आदि मानव की भाषा की तुलना में आज के मानव की भाषा अत्यंत प्रौढ और परिष्कृत है। इसी प्रकार 'शिशु' की भाषा की तुलना में परिपक्व व्यक्ति की भाषा पर्याप्त परिमार्जित होती है।

भाषा निरंतर प्रयोग से ही प्रौढ (विकसित) होती है। उदाहरण के लिए ''खड़ी बोली'' को ही लिजिए; भारतेंदु से लेकर आजतक उसमें बहुत परिष्कार होता आया है, और आगे भी होता रहेगा।

15) **भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर बढ़ती है –**

प्रारंभ में भाषा का ढ़ाँचा संयोगावस्था में रहता है। धीरे-धीरे वह वियोगात्मक होता जाता है।

संयोगात्मकता से तात्पर्य है प्रकृति और प्रत्यय का मिला-जुला रहना और वियोगात्मकता का अर्थ है प्रकृति और प्रत्यय का अलग रहना। भाषा की संयोग अवस्था कठिनता से युक्त होती है, तो वियोग अवस्था, सरलता से युक्त होती है। भाषा स्वाभाविक रूप से कठिनता से सरलता की ओर बढ़ती है। भाषा का प्रारंभिक रूप बहुधा संयोगावस्था में होता है, इसलिए आगे चलकर वह वियोग अवस्था की ओर बढ़ती है। संस्कृत; सहित अर्थात संयोगात्मक भाषा और हिंदी; व्यवहित अर्थात वियोगात्मक भाषा है। जो संस्कृत भाषा संयोगावस्था के कारण क्लिष्ट बन गई थी, वही आगे चलकर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश से होकर अधिकाधिक सरल अर्थात वियोग अवस्था की ओर बढ़ती है और हिंदी, मराठी, गुजराती आदि सरल वियोग अवस्थाप्रधान आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में रुपांतरित होती है। जैसे, वाक्य का संयोगावस्था से

वियोगावस्था की ओर बढ़ना –

संयोग अवस्था	वियोग अवस्था	
संस्कृत	**हिंदी**	**मराठी**
राम:गच्छति।	राम जाता है।	राम जातो.
सीता गच्छति।	सीता जाती है।	सीता जाते.
विभायानुभाव व्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पति:।	विभाव अनुभाव और व्यभिचारी के संयोग से रस की निष्पति होती है।	विभाव, अनुभाव आणि व्यभिचारी यांच्या संयोगाने रसाची निष्पत्ति होते.

इस प्रकार भाषा संधिप्रधान तथा समास प्रधान संयोगावस्था से वियोग अवस्था की ओर बढ़ती है।

- **भाषा एक सहज नैसर्गिक प्रक्रिया है –**

भाषा एक सहज नैसर्गिक प्रक्रिया है और प्रकृति के अनुसार इसका सर्वदा ही विकास होता रहता है। अन्य ज्ञान उपलब्ध कराने में या वस्तुएँ सीखने में जितने कठोर श्रम हमें करने पड़ते है उतना और उतनी मात्रा में श्रम या शक्ति भाषा सीखने में खर्च नहीं करनी पड़ती। सहज का अर्थ यहाँ जन्मजात नहीं मानना चाहिए और न नैसर्गिक भी। बच्चा जन्म लेने के बाद ही भाषा को सीखता है। परंतु उसे सीखने में उसे अन्य वस्तुओं की अपेक्षा कम श्रम या शक्ति लगानी पड़ती है। वह भाषा को अनायास नहीं पाता, परंतु अल्पायास से प्राप्त करता है।

भाषा के उपर्युक्त लक्षणों से भाषा की विशिष्ट प्रकृति अपने आप स्पष्ट हो जाती है। ये सभी लक्षण भाषा की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं।

1.3.3 भाषा की उत्पत्ति एवं तत्संबंधी विविध वाद :

भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करनेवाले लोगों के सामने यह समस्या हमेशा ही रही है कि भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई? उसके साथ ही साथ मनुष्य ने बोलना कहाँ सीखा ? कैसे बोलना सीखा? जब बोलना सीखा तब सर्व प्रथम किस भाषा में बोलना शुरू किया? मनुष्य की आदिम भाषा का स्वरूप कौनसा था? आदि प्रश्न भाषा वैज्ञानिकों के लिए बड़ी चुनौती है। इन समस्याओं पर बहुत दिनों से भाषा-वैज्ञानिक विचार करते आए हैं, किंतु अभी तक कोई एक मत सर्वमान्य नहीं हो सका है।

सृष्टि के आरंभ में पृथ्वी पर मनुष्य ने पहले-पहल किस प्रकार बोलना आरंभ किया, यह एक विवादास्पद विषय बना हुआ है। इस संबंध में विद्वानों ने अपने विभिन्न मत प्रस्तुत किए हैं। वस्तुत: भाषा की उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों ने जितने भी सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं, वे केवल अनुमान पर ही आधारित हैं। विद्वानों ने उत्पत्ति की संभावना के संबंध में अनुमान किया है और उसे ही सिद्धांत का नाम दे दिया है।

भाषा की उत्पत्ति से संबंधित दैवी उत्तपत्ति सिद्धांत, विकासवादी सिद्धांत, धातु सिद्धांत, निर्णय सिद्धांत, अनुकरण सिद्धांत, मनोभावभिव्यक्ति सिद्धांत, यो-हे-हो सिद्धांत, इंगित सिद्धांत, टा-टा सिद्धांत, संगीत सिद्धांत, संपर्क सिद्धांत, समन्वित रुप आदि प्रत्यक्ष मार्गों के साथ तीन परोक्ष मार्ग रुपी सिद्धांत प्रचलित हैं उनमें से हमारे पाठ्यक्रम के लिए निर्धारित सिद्धांतों का ही हम यहाँ विवेचन करेंगे।

1) **दैवी उत्पत्ति सिद्धांत** (Divine Origin) :

इस सिद्धांत को दिव्य उत्पत्तिवाद या दिव्य सिद्धांत भी कहते हैं। भाषाओं की उत्पत्ति के संबंध में यह सबसे प्राचीन मत है। इस मत के अनुसार भाषा की उत्पत्ति ईश्वर द्वारा हुई है। जैसे ईश्वर ने मनुष्य को बनाया, वैसे ही उसने उसे भाषा दी। मतलब भगवान ने ही भाषा को बनाया। मनुष्य जब उत्पन्न हुआ तो अपनी संपूर्ण विशेषताओं के साथ इस पृथ्वी पर आया था। जैसे अपने आप मनुष्य में चेतना का विकास हुआ, वैसे ही उसे अपने आप भाषा भी प्राप्त हो गई। अत: इस सिद्धांत के अनुसार भाषा का स्रष्टा (निर्माता) ईश्वर है। इस सिद्धांत की पुष्टि के लिए धार्मिक ग्रंथों का उल्लेख किया जाता है।

भारतीय पंडित वेदों को अपौरूषेय मानते हैं। उनका दृढ़ विश्वास रहा है कि संस्कृत को ईश्वर ने बनया। और फिर उसी भाषा में वेदों की रचना की। संस्कृत को 'देवभाषा' कहने में भी उनके इसी विश्वास की ओर संकेत है। संस्कृत भाषा तथा उसके व्याकरण के मूलाधार पाणिनि के 14 सूत्र शिव के डमरू से निकले माने जाते हैं। ईश्वर निर्मित होने के कारण ही इसे सनातनी पंडित संसार की सभी भाषाओं का मूल मानते हैं। अर्थात, भारतीय हिंदू विद्वान वेदों को अपौरुषेय याने अलौकिक मानते हैं। उनके अनुसार ईश्वर ने संस्कृत की रचना की, फिर उसी भाषा में वेदों का निर्माण किया गया।

बौद्ध मतावलंबी 'पालि' को भी इसी प्रकार मूल भाषा मानते रहें हैं, और उनका विश्वास रहा है कि, 'पालि' भाषा अनादि काल से चली आ रही मूलभाषा है।

'जैन' लोग तो संस्कृत पंडितो' और बौद्धों से भी चार कदम आगे हैं, उनके नुसार तो 'अर्धमागधी' केवल मनुष्यों' की ही नहीं; पशु, पक्षियों की भी भाषा थी।

ईसाई लोग और उनमें भी प्रमुखत: कैथोलिक लोग 'हिब्रू' को (जिसमें उनका धर्म ग्रंथ "Old Testament: लिखा गया है।) संसार की सभी भाषाओं की जननी मानते हैं। उनके अनुसार 'हिब्रु' आदम और हव्वा को पूर्ण विकसित भाषा के रूप में भगवान द्वारा दी गई थी। फिर बाबुल की मीनारवाली घटना के कारण उसी के अनेक रूप हो गए और इस प्रकार संसार में अनेक भाषाएँ बन गई। इसके आधार पर 'हिब्रू' के विद्वानों ने संसार की अनेक भाषाओं से उन शब्दों को इकठ्ठा किया था, जो 'हिब्रु' शब्दों से मिलते-जुलते थे, और उनसे यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि यथार्थत: 'हिब्रु' सभी भाषाओं की जननी है। मुसलमान लोग 'कुरान' को खुदा का कलाम मानते हैं। फारसी धर्मवालों ने 'अवेस्ता' भाषा को ईश्वर निर्मित होने का स्वीकार किया। मिस्त्र देश के प्राचीन लोगों का अपनी भाषा के संबंध में कुछ ऐसा ही विश्वास था।

प्लेटो ने सभी चीजों के नामों को प्राकृतिक या प्रकृति-प्रदत्त कहा था। यह मत भी दैवी उत्पत्ति का ही एक रूप है। इसी मत के प्रभाव से लोगों का यह भी मत रहा कि मनुष्य जन्म से ही एक भाषा सीखकर आता है और वही भाषा ईश्वर की तथा सब से पुरानी भाषा है। इस बात की परीक्षा करने के लिए मिस्र के राजा सैमेटिक्स (Psammitichos) ने दो बच्चों को जन्म के बाद ही अलग रखा था। उनके पास जानेवालों को कुछ बोलने का निषेध था। बडे होने पर उनके मुँह से केवल 'बेकोस' (bekos) शब्द ही सुना गया। 'बकोस' (bekos) फ्रीजियन भाषा का शब्द है और इसका अर्थ 'रोटी' होता है। 'रोटी' देनेवाले फ्रीजियन नौकर ने गलती से कभी इस शब्द का उच्चारण उनके सामने कर दिया था। और बच्चों ने इस शब्द का अनुकरण कर लिया।

'अकबर बादशाह (1556-1605) ने भी इस प्रकार का प्रयोग किया था। 'अकबर बादशाह' का प्रयाग सबसे सफल था और फल यह हुआ कि प्रयोग के लड़के गूँगे निकले। इस प्रकार कहना न होगा कि बच्चा माँ के पेट से कोई भाषा सीखकर नहीं आता । अर्थात ईश्वर प्रदत्त कोई भाषा नहीं है और ऐसा मानना अंधविश्वास मात्र है। आज इस मत को कोई नहीं मानता ।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

1) दैवी सिद्धांत अब पूर्णत: अवैज्ञानिक समझा जाने लगा है। इस वैज्ञानिक युग में जब ईश्वर पर ही विश्वास नहीं है, तो उसके द्वारा उत्पन्न की गई भाषा पर विश्वास करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

2) दैवी सिद्धांत में सबसे आपत्तिजनक बात यह है कि, यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त है, तो विभिन्न भाषाओं में इतने भेद क्यों है? पूरे संसार के गदहे, घोडे, भैंसे, कुत्ते आदि एक से बोलते हैं, किंतु मनुष्यों में वह एकरूपता नहीं है।

3) यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त होती तो कदाचित आरंभ से ही वह विकसित होती, किंतु इतिहास में इसके उल्टे प्रमाण मिलते हैं।

4) दिव्य सिद्धांत के खंडनकर्ता जर्मन भाषा वैज्ञानिक 'हर्डर' का तर्क है कि यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त होती तो संसार के सभी मनुष्य, पशु-पक्षी एक-सी भाषा का प्रयोग करते। उदा, पूरे संसार के गदहे, घोडे, भैंसे, कुत्ते आदि एक से बोलते थे, यदि भाषा ईश्वर-प्रदत्त होती, तो कदाचित आरंभ से ही विकसित होती किंतु बात वैसी नहीं है।

वस्तुत: यह सिद्धांत बिलकुल ही कपोल कल्पित और अवैज्ञानिक है।

2) **धातु सिद्धांत** (Root Theory) :

इस सिद्धांत को डिंग-डांग वाद (Ding Dong Theory), रणन सिद्धांत या स्वाभाविक उत्पत्तिवाद भी कहते हैं। इस सिद्धांत की ओर सर्व प्रथम ग्रीक विद्वान 'प्लेटो' ने संकेत किया था। किंतु इसे व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन प्रोफेसर 'हेस' (Heyese) का है। इन्होंने भी कभी अपने किसी

व्याख्यान में इसका उल्लेख किया था, जिसे बाद में उनके शिष्य डॉ. स्टाइन्थाल' ने मुद्रित रूप में विद्वानों के समक्ष रखा । फिर 'मैक्स मूलर' ने इस मत को अपनी पुस्तक में स्थान दिया, लेकिन बाद में इसे निरर्थक कहकर छोड़ दिया।

इस सिद्धांत के अनुसार शब्द और एक प्रकार का रहस्यात्मक प्राकृतिक संबंध होता है। संसार (विश्व) की हर एक वस्तु की अपनी एक खास ध्वनि होती है। यदि हम एक लकड़ी के डंडे से एवं हथौडे से एक धातु, एक शीशे, एक पत्थर, एक ईंट, एक लकड़ी पर अलग-अलग चोट करें तो हम देखेंगे कि उनसे अलग-अलग प्रकार की ध्वनियाँ निकलती हैं। इसलिए हम सुनकर ही अनुमान लगा लेते हैं कि अमुक चीज टूट गई है।

आरंभ में आदमी के पास वाणी नहीं थी, लेकिन जब वह जगत की विभिन्न वस्तुओं के संपर्क में आया तो सहज ही उसके मुँह से वस्तु बोधक शब्द निकल पड़े। जैसे ही वह किसी चीज के संपर्क में आता उसके लिए उसके मुँह से एक ध्वनि निकल जाती। भाषा का निर्माण कार्य पूरा हो जाने के बाद मनुष्य की यह नैसर्गिक शक्ति अपने आप समाप्त हो गई। विभिन्न वस्तुओं की ये ध्वन्यात्मक अभिव्यक्तियाँ 'धातु' थीं। आरंभ में इस प्रकार से धातुओं की संख्या बहुत अधिक थी, लेकिन धीरे-धीरे पयार्य होने के कारण या योग्यतमावशेष सिद्धांत के कारण उनमें से बहुत-सी लुप्त हो गई और सिर्फ 400-500 धातुएँ शेष रहीं। इन्हीं धातुओं से भाषा की उत्पत्ति हुई। अर्थात् इन्हीं धातुओं से संपूर्ण भाषा का निर्माण हुआ। इस सिद्धांत के अनुसार उन धातुओं की ध्वनि तथा उनके अर्थ में एक रहस्यात्मक संबंध (Mystic harmony) था। इस मत के समर्थकों का यह भी कहना था कि प्राचीन मनुष्य में वह शक्ति थी, किंतु भाषा बन जाने पर शक्ति की आवश्यकता नहीं रही। अत: वह धीरे-धीरे नष्ट हो गई। आज का मनुष्य इसी लिए उससे शून्य है। इस सिद्धांत को कुछ दर्शनिकों ने भी किसी रूप में माना था और इसे 'नेटिविस्टिक थ्यूरी' (Nativistic Theory) की संज्ञा दी थी।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

1) धातु सिद्धांत अधिक लोकप्रिय नहीं हुआ, क्योंकि इसका आधार काल्पनिक है और यह कल्पना भी आधार रहित है। जैसे कोई जादूगर जादू की लकड़ी घुमाकर क्षण भर में कुछ का कुछ कर देता है। वैसे ही मनुष्य वस्तुओं के संपर्क में आने पर शब्द बनाता चला गया और जैसे ही सब शब्द बन गए उसकी जादू जैसी शक्ति समाप्त हो गई। इस कल्पना पर जरा-भी विश्वास नहीं किया जा सकता।

2) धातु सिद्धांत के अनुसार विभिन्न धातुओं की ध्वन्यात्मक अभिव्यक्ति प्रारंभ में धातु से होती थी, लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भाषा में धातुएँ बाद में आई हैं, आरंभ में नहीं। भाषा सीखने की प्रक्रिया में पहले संज्ञाएँ आती हैं।

3) धातु सिद्धांत के विरुद्ध सबसे बड़ा तर्क यह है कि, संसार के कुछ ही भाषा परिवारों में जैसे 'भारोपीय' तथा 'सिमेटिक' में ही कुछ धातुएँ हैं, परंतु अनेक भाषा परिवार ऐसे हैं जिनमें धातुओं का कोई

अस्तित्व नहीं है। अर्थात् संसार में जिन भाषाओं में धातुओं का पूर्णतया अभाव है, उनकी उत्पत्ति कैसे हुई होगी? इस प्रश्न का उत्तर इस सिद्‌धांत के पास नही है।

4) धातु सिद्‌धांत शब्द और अर्थ में रहस्यात्मक स्वाभाविक संबंध मानता है। पर शब्द और अर्थ का सांकेतिक संबंध है, न कि स्वाभाविक।

5) जिन भाषाओं में धातुएँ हैं, उनमें वे कृत्रिम या बाद में खोजी हुई हैं। अत: उनके आधार पर भाषा की उत्पत्ति प्रामाणिक नहीं मानी जा सकती।

6) भाषा केवल धातु से ही नहीं बनती एवं निर्मित होती है तो उसके लिए प्रत्यय, उपसर्ग आदि अन्य घटकों की भी आवश्यकता होती है। इन सभी आपत्तियों का समाधान धातु सिद्‌धांत से नहीं हो पाता। इस कारण ही प्रो. मैक्समूलर ने भी बाद में भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से धातु सिद्धांत को निरर्थक माना।

3) **अनुकरण सिद्‌धांत** (Imitative Theory) :

अनेक विद्‌वानों ने अनुकरण सिद्‌धांत का समर्थन करते हुए माना है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरण के आधार पर हुई है। इस सिद्‌धांत के अनुसार मनुष्य में अनुकरण की नैसर्गिक प्रवृत्ति होती है। इस सिद्‌धांत के अनुसार वस्तुओं से उत्पन्न हानेवाली नैसर्गिक ध्वनियों पर उनके नाम दिए गए हैं। जिस वस्तु से जिस प्रकार की ध्वनि सुनाई दी उसका नाम उस ध्वनि के अनुकरण पर रख दिया गया है। अर्थात मनुष्य ने अपने आसपास के जीवों और चीजों आदि की आवाज आदि के अनुकरण पर प्रारंभ में शब्द बनाए और उसी आधार पर अपनी भाषा का महल खड़ा किया। इस सिद्‌धांत के अंतर्गत तीन उपसिद्‌धांत रखे जा सकते हैं-

क) ध्वन्यात्मक अनुकरण सिद्‌धांत

ख) अनुरणात्मक अनुकरण सिद्‌धांत

ग) दृश्यात्मक अनुकरण सिद्‌धांत।

नीचे तीनों पर अलग-अलग विचार किया जा रहा है।

क) ध्वन्यात्मक अनुकरण सिद्‌धांत :

इसके अन्य नाम ''अनुकरण सिद्‌धांत, अनुकरण,मूलकतावाद, शब्दानुकरणवाद तथा शब्दानुकरण, भों-भों वाद, या भौं-भौं सिद्‌धांत'' आदि हैं। अंग्रेजी में इसे (Bow-Wow Theory, onomotopoeic या Onomotopoetic Theory या Echoic Theory आदि कहते हैं।

इस वाद के अनुसार मनुष्य ने अपने आसपास के पशुपक्षियों आदि की होनेवाली ध्वनियों के अनुकरण पर अपने लिए शब्द बनाए और फिर उसी आधार पर पूरी भाषा खडी हुई। अर्थात इस वाद के अनुसार मनुष्य

ने अपने आसपास के पशुपक्षियों की ध्वनियों के अनुकरण पर कुछ शब्द बनाए, और उन शब्दों से भाषा की उत्पत्ति हुई।

इस वाद के अनुसार मनुष्य ने कुत्ते के भौंकने की ध्वनि का अनुकरण करके कुत्ते को पहचानने के लिए हिंदी में 'भों-भों' या 'भौं-भौं' शब्द, अंग्रेजी भाषा में Bow-Bow (बाउ-बाउ) शब्द और मराठी भाषा में 'भू-भू' शब्द बनाया।

बिल्ली की ध्वनि का अनुकरण करके हिंदी में 'म्याऊँ-म्याऊँ' शब्द, मराठी भाषा में 'म्याँव-म्याँव' शब्द, चीनी भाषा में 'मिआऊ-मिआऊ' शब्द बनाये जिससे बिल्ली का अर्थबोध होने लगा। मनुष्य ने कौवे की 'काँव-काँव' ध्वनि के अनुकरण पर उसे पहचानने के लिए हिंदी में 'काँउ काँउ' शब्द बनाया। कोयल की 'कू-कू' कूकने की ध्वनि के अनुकरण पर उसे पहचानने के लिए 'कोकिल' शब्द बनाया। उसी प्रकार 'का-का' करनेवाले को 'काक' कहा जाने लगा। मुर्गे की 'कुकडू कूँ' की ध्वनि से उसका नाम 'कुक्कुट' पड़ा।

इसप्रकार मनुष्य ने पशु और पक्षियों की ध्वनियों के अनुकरण पर कुछ शब्द बनाए हैं। मैक्समूलर ने इस पद्धति से बने शब्दों की हँसी उडाते हुए हँसी में उसे 'बाउवाउ थेअरी' (Bow-wow-Theory) कहा। Bow-wow' (बाउ-वाउ) यह शब्द अंग्रेजी भाषा में 'कुत्ते' की ध्वनि के अनुकरण पर बनाया गया शब्द है।

भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से ध्वन्यात्मक अनुकरण सिद्धांत कुछ मात्रा में निश्चित ही उपयोगी है, क्योंकि ध्वन्यात्मक अनुकरण पर स्वाभाविक रूप से कुछ सार्थक शब्द बने हैं, और बनते भी हैं। ध्वन्यात्मक अनुकरण मूलक शब्द इसलिए सार्थक होते हैं कि, उस से विशिष्ट पशु या पक्षी का बोध होता है।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

1) ध्वन्यात्मक अनुकरण मूलक शब्दों की संख्या सीमित है। इसलिए इस वाद पर आरोप करते हुए 'रेनन आदि ने प्रश्न उठाया है कि, सीमित संख्यावाले ध्वन्यात्मक अनुकरण मूलक शब्दों से भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई होगी? इस प्रश्न का निराकरण ध्वन्यात्मक अनुकरण सिद्धांत से नहीं होता।

2) प्रो. रेनन (Renun) ने इस प्रकार आपत्ति की है कि यदि मनुष्य पशुपक्षी जैसे तुच्छ जीवों के शब्दों का अनुकरण करके भाषा बना सकता है, तो यह पशु-पक्षियों से निकृष्ट सिद्ध होता है।

3) हर भाषा के कुछ ही शब्दों की रचना इससे स्पष्ट होती है। यह सिद्धांत अधिक से अधिक एक प्रतिशत शब्दों का समाधान प्रस्तुत करता है। शेष 99 प्रतिशत से भी अधिक शब्दों के बारे में यह मत मौन है।

4) कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनमें ऐसे शब्द (ध्वन्यानुकरण शब्द) हैं ही नहीं। जैसे-उत्तरी अमेरिका की 'अथबस्कन' में इस प्रकार के ध्वन्यात्मक शब्दों का नितांत अभाव है।

5) यदि ध्वनि-अनुकरण ही आधार होता तो सभी भाषाओं में उन अर्थों के लिए समान शब्द होते। काक-कौवा, कोयल-कोकिल, झरना-निर्झर आदि का ही भेद नहीं होता अपितु अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच आदि भाषाओं में कौवा, मेंढ़क, बिल्ली, कुत्ता आदि के लिए सर्वथा पृथक् शब्द भी नहीं होते।

ख) अनुरणात्मक अनुकरण सिद्धांत :

इस वाद को 'अनुकरणमूलकता वाद', 'अनुरणन सिद्धांत' भी कहा जाता है। इस वाद के अनुसार मनुष्य ने निर्जीव वस्तुओं की गूँजनेवाली ध्वनियों का अनुकरण करके उन्हीं का अर्थबोध कराने के लिए हिंदी में टन-टन शब्द अंग्रेजी में 'डिंग-डिंग' शब्द बनाए हैं। ठीक इसी तरह दरवाजा खट-खटाने से या किसी निर्जीव वस्तु पर आघात करने से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का अनुकरण करके हिंदी में 'खट-खट', 'ठक-ठक' आदि शब्द बनाए गए हैं।

झरने से बहते पानी से निकलनेवाली ध्वनि का अनुकरण करके हिंदी में 'झर-झर', 'कल-कल' आदि शब्द बनाए गए, जिनसे झरने के बहते पानी की विशिष्ट गति का अर्थबोध हो जाता है।

संस्कृत में 'नद-नद' नाद के आधार पर ही 'नद' और 'नदी' शब्द बने हैं।

दूसरे शब्दों में कहा जाता है कि इसमें धातु, काठ, पानी, आदि निर्जीव चीजों की ध्वनि का अनुकरण है। जैसे झनझनाना, तड़तड़ाना, कल-कल, छल-छल, ठक-ठक, खट-पट आदि। अंग्रेजी में murmur gazz, Thunder, Jazz आदि इसी प्रकार के शब्द हैं। संस्कृत में 'नद-नद' नाद के आधार पर ही 'नद' और 'नदी' शब्द बने हैं। इस प्रकार 'पत' धातु से निर्मित 'गिरना' शब्द का आधार कदाचित पत्र का 'पत्' ध्वनि करते हुए गिरना है। इस वर्ग के भी कुछ शब्द प्राय: सभी भाषाओं में मिल जाएँगे।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

अनुकरणात्मक अनुकरणवाद भी अपने सीमित रूप में भाषा की उत्पत्ति को समझने की दृष्टि से कुछ उपयोगी है, लेकिन इस प्रकार के शब्दों की संख्या मर्यादित है, तथापि 'ध्वन्यात्मक अनुकरणवाले' शब्दों को लेकर ऊपर ध्वन्यात्मक अनुकरण के संदर्भ में जो आक्षेप दिए गए हैं वे यहाँ पर भी लागू होते हैं।

ग) दृश्यात्मक अनुकरण सिद्धांत :

इस वाद के अनुसार मनुष्य ने दृश्य की विशिष्ट दशा को देखकर उसके अनुकरण के रूप में कुछ ऐसा शब्द बनाया जिससे उस दृश्य की विशिष्ट दशा का अर्थबोध हो जाता है। इस कारण ही किसी प्रकाशमान और चमकनेवाले दृश्य के अनुकरण पर 'हिंदी में' जगमग, बगबग, चकाचक, जगमगाहट, चमचमाहट आदि शब्द बनाए गए, जिनसे उस दृश्य की विशिष्ट दशा का अर्थबोध हो जाता है।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

दृश्यात्मक अनुकरणवाद भी अत्यंत मर्यादित रूप में भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से कुछ उपयोगी है। लेकिन इस प्रकार के शब्दों की संख्या अत्यंत मर्यादित होने के कारण ऊपर (क)ध्वन्यात्मक

अनुकरण वाले शब्दों के संदर्भ में जो आक्षेप किए गए है वे यहाँ पर भी लागू होते हैं।

संक्षेप में अनुकरण सिद्‌धांत का प्रतिपादन अनेक विद्वानों ने किया है। इस सिद्‌धांत के अनुसार मनुष्य में अनुकरण की नैसर्गिक प्रवृत्ति होती है। उसके आधार पर मनुष्य ने आसपास के पशुपक्षियों की ध्वनियों के अनुकरण पर कुछ शब्द बनाए, मनुष्य ने निर्जीव वस्तुओं की गुँजनेवाली ध्वनियों का अनुकरण करके उन्हीं का अर्थबोध कराने के लिए शब्द बनाए तथा मनुष्य ने दृश्य की विशिष्ट दशा को देखकर उसके अनुकरण के रूप में कुछ ऐसे शब्द बनाए जिससे उस दशा की विशिष्ट दशा का अर्थबोध हो जाता है।

4) **संपर्क सिद्‌धांत** (Cotact Theory) :

बाल -मनोविज्ञान, पशु-मनोविज्ञान और अविकसित मानव के मनोविज्ञान का अध्ययन करनेवाले मनोविज्ञानवेत्ता प्रो. जी. रेवेज (G. Revese) ने इस सिद्‌धातं का प्रतिपादन किया है। इस सिद्‌धांत में संपर्क का अर्थ है सामाजिक जीवों में (जिनमें मनुष्य प्रमुख है) आपसी संपर्क रखने की सहजात प्रवृत्ति। समाज का निर्माण इसी प्रवृत्ति के कारण हुआ है।

आदिम मनुष्यों के भी छोटे-छोटे वर्ग या समाज थे। और उनमें आपस में प्रारंभिक भावनाओं (भूख-प्यास, कामेच्छा, रक्षा आदि से सम्बद्‌ध) को एक दूसरे पर अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न स्तरों पर तरह-तरह के संपर्क स्थापित किए जाते थे। इन संपर्कों के लिए स्पर्श आदि का सहारा भी चलता रहा होगा। पर साथ ही मुखोच्चारित ध्वनियाँ भी सहायक रही होगी। भाषा उसी का विकसित रूप है। जैसे-जैसे संपर्क की आवश्यकता बढ़ती गई और उसकी स्पष्टता की आवश्यकता का अनुभव होता गया, संपर्क के माध्यम से ध्वनि का भी विकास होता गया। आरंभ की ध्वनियाँ आपेक्षाकृत अधिक स्वाभाविक थीं पर धीरे-धीरे मानव आवश्यकतानुसार कृत्रिमता के आधार पर उन्हें विकसित करता गया। संपर्क प्रारंभ में भावों के स्तर पर (Emotional contact) रहा होगा, और बाद में 'विचारों' के स्तर पर (Intellectual contact) विचारों के स्तरों पर संपर्क के बढ़ने पर भाषा में अधिक विकास हुआ होगा। 'जी रेवेज' ने इस सिद्‌धांत पर विचार करते हुए ध्वन्यात्मक रूप के विकास पर भी प्रकाश डाला है। हर्ष, शोक, आदि की स्थिति में भावावेशात्मक ध्वन्याभिव्यक्ति को 'रेवेज' विनिमय या दूसरे तक अपने भावों को पहुँचानेवाली अभिव्यक्ति नहीं मानते, किंतु संपर्क ध्वनि का इससे संबंध होने का और कदाचित, एक-दूसरे का विकसित रूप होने का वे स्वीकार करते हैं। संपर्क-ध्वनी का विकास संसूचक ध्वनि में होता है, जिनमें चिल्लाना, पुकारना आदि हैं। इसी अवस्था में भाषा के आदिम शब्दों का विकास हुआ होगा, जिनका विशेष अवसरों पर प्रयोग होने के कारण विशेष अर्थो से भी संबंध स्थापित हो गया होगा। इस समय संबंधियों एवं वस्तुओं के लिए शब्द रहे होंगे, किंतु उनका संबंध संज्ञा से न होकर क्रिया से रहा होगा। जैसे, 'माँ' का अर्थ 'माँ दूध दो' या 'कुछ और करों' आदि। इस प्रकार क्रिया पहले आई, संज्ञा बाद में। साथ ही व्याकरणिक दृष्टि से ये शब्द न होकर वाक्य रहे होंगे। फिर और विकास होने पर कई प्रकार के शब्दों को मिलाकर छोटे-छोटे वाक्य बने होंगे किंतु वाक्यों में अलग-अलग शब्दादि का बोलनेवालों को पता नहीं रहा होगा। धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों विचारों के स्तर पर संपर्क बढ़ता गया वैसे-वैसे भाषा विकसित होती गई होगी।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

1) इस वाद के अनुसार यह तर्क सम्मत है कि मनुष्य का समाज के भीतर जैसे-जैसे संपर्क बढ़ता रहा होगा, वैसे-वैसे नए-नए शब्दों के आधार पर भाषा विकसित होती रही होगी, लेकिन इस मत में मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित अनुमान को अधिक महत्त्व मिला है। इसलिए इस मत से निश्चित रूप से यह स्पष्ट नहीं होता कि, मनुष्य ने आपस में संपर्क बनाए रखने के लिए अपने मुख से किस प्रकार की ध्वनियों का उच्चारण किया ? फिर उन शब्दों से भाषा का विकास किस प्रकार होता रहा? इन शब्दों के संतोषजनक उत्तर इस वाद से नहीं मिलते हैं।

2) प्रो. जी. रेवेज मनोविज्ञान के आचार्य हैं। प्रो.रेवेज ने बाल-मनोविज्ञान, पशु-मनोविज्ञान तथा आदिम अविकसित मनुष्य के मनोविज्ञान के सहारे जो यह सिद्धांत रचा है, पूर्णत: तर्क सम्मत है, किंतु इसमें - मनोवैज्ञानिक ढंग से उत्पत्ति और विकास के सामान्य सिद्धांतों का ही विवेचन है। शायद इसीलिए इनके सिद्धांतों को देखने के बाद भी 'कासिडी' आदि विद्वानों ने भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को अनिर्णित ही माना है।

फिर भी प्रो. रेवेज ने क्रिया-शब्दों की उत्पत्ति के बारे में और फिर संज्ञा शब्दों की उत्पत्ति के बारे में जो तर्क प्रस्तुत किए हैं, वे महत्त्वपूर्ण हैं।

5) **समन्वित (समन्वय) सिद्धांत :**

समन्वित सिद्धांत या समन्वय सिद्धांत का प्रतिपादन प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक 'स्वीट' महोदय ने किया है। उन्होंने भाषा की उत्पत्ति के विविध सिद्धांतों में से उपयोगी सिद्धांतों के आधार पर समन्वय सिद्धांत की स्थापना कर भाषा की उत्पत्ति पर प्रभाव ड़ालने की कोशिश की है। 'स्वीट' के अनुसार भाषा प्रारंभिक रूप में 'भाव संकेत' या 'इंगित' और 'ध्वनि-समुदाय' (Sound-group) दोनों पर आधारित थी। ध्वनि-समुदाय के आधार पर ही शब्दों का आगे विकास हुआ। 'स्वीट' के अनुसार प्रारंभ में तीन प्रकार के शब्द समूह थे। 1) अनुकरणात्मक, 2) भावावेश-व्यंजक, 3) प्रतीकात्मक।

1) **अनुकरणात्मक शब्द :** भाषा की उत्पत्ति अनुकरणात्मक शब्दों के बनने के आधार पर आरंभ हुई। उन अनुकरणात्मक शब्दों में ध्वन्यात्मक, अनुकरणात्मक शब्दों का पहला क्रम रहा, जैसे भौं-भौं, म्याउँ-म्याउँ, कौवा आदि। फिर अनुरणात्मक अनुकरणमूलक शब्दों का दूसरा क्रम रहा, जैसे- डिंग-डाँग, खट-खट, ठक-ठक, झर-झर आदि। उसके बाद दृश्यात्मक अनुकरण मूलक शब्दों का तीसरा क्रम रहा, जैसे - जगमग, चकाचक आदि।

2) **भावावेश-व्यंजक शब्द :** भाषा के विकास क्रम की दूसरी अवस्था में भावावेश-व्यंजक या मनोभावाभिव्यंजक शब्द सहायक बन गए। भाषा-विकास क्रम की इस दूसरी अवस्था में मनुष्य ने भावावेग में अपने भीतर के भावों की अभिव्यक्ति के लिए कुछ भावव्यंजक शब्द बनाए, जैसे - वाह! वाह! ओह! आह!, धिक्, छि: आदि।

3) **प्रतीकात्मक शब्द :** भाषा के विकास क्रम की तीसरी अवस्था में मनुष्य ने भाषा के प्रौढ़ विकास के लिए प्रतीकात्मक (symbolic) शब्दों को बनाना आरंभ किया। मनुष्य ने प्रतीकात्मक शब्द बनाने के लिए 'भाव-संकेत' या 'इंगित' और 'ध्वनि-समवाय' (Sound-group) इन दोनों के महत्त्व का आधार लिया। स्वीट के अनुसार तीसरे प्रकार के अर्थात् प्रतीकात्मक शब्दों का भाषा के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। उदा, बच्चा माँ-बाप के होठों का अनुकरण कर होंठ चलाने का प्रयत्न करता है, और 'म', 'ब', 'प' आदि ओष्ठ्य ध्वनियों या ध्वनि समूहों का सहज उच्चारण कर बैठता है और परिवार के लोग उन ध्वनियां का प्रयोग अपने लिए समझ लेते हैं। इस प्रकार की ध्वनियों में माँ, बाप, बाबा, मामा, पापा आदि अर्थ निहित हो जाते है, एवं उनके लिए प्रतीकात्मक शब्दों का निर्माण हो जाता है।

कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो दो वर्ग के अंतर्गत आते हैं। उदा, 'हर्ष' शब्द भाव-व्यंजक होते हुए भी अंशत: प्रतीकात्मक है। इस प्रकार आरंभ में बहुत सारे शब्द बने होंगे, किंतु योग्यतमावशेष (Survival of the fittest) का सिद्धांत शब्दों पर भी लागू होता है। इस कारण बोलने, सुनने और अर्थ को व्यंजित करनेवाले शब्द ही अवशिष्ट (शेष) रह गए और आवश्यकतानुसार नए शब्द सादृश्य आदि के आधार पर निर्माण होते रहे।

इस प्रकार स्वीट के अनुसार भाषा अनुकरणात्मक भाव-व्यंजक तथा प्रतीकात्मक शब्दों से आरंभ हुई। धीरे-धीरे शब्दों का अर्थ विकसित होता गया और नवीन शब्दों का निर्माण होता गया।

संक्षेप में कहा जाता है कि भाषा की उत्पत्ति के कुछ सिद्धांतों में तो कोई तथ्य ही नहीं है और कुछ में अंशिक सत्य है। यह देखकर समन्वय सिद्धांत की कल्पना की गई है। इसके अनुसार भाषा की उत्पत्ति किसी एक सिद्धांत के आधार पर नहीं हुई है बल्कि सभी सिद्धांतों के मेल से हुई है। सभी सिद्धांतों में से प्राप्त सत्यांश को लेकर समन्वय सिद्धांत का निर्माण किया गया है।

- **आक्षेप / समीक्षा :**

1) 'स्वीट' द्वारा प्रतिपादित 'समन्वय सिद्धांत' अनेक सिद्धांतों का मिश्रित रुप है। इस सिद्धांत में सब से आपत्ति जनक बात यह है कि यह सिद्धांत जिन सिद्धांतों पर आधारीत है वे सभी सिद्धांत इस बात को मानकर चलते हैं कि प्रारंभ में मनुष्य 'मूक' था इस मान्यता को किसी प्रकार स्वीकार नहीं किया जा सकता अत: समन्वय सिद्धांत मान्य नहीं हो सकता।

2) सभी सिद्धांतों का समन्वय कर देने पर भी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न पूर्ण रूप से हल नहीं हो सकता, एवं पूर्ण रूप से सुलझाया नहीं जा सकता। शेष, हजारों, लाखों शब्दों की समस्या वैसी ही बनी रहती है।

इस सिद्धांत के पक्ष के संबंध में कहा जा सकता है कि यह सिद्धांत एक व्यापक सिद्धांत है। इससे भाषा की उत्पत्ति पर प्रकाश न पड़कर भाषा में प्रयुक्त शब्दों का विकास स्पष्ट होता है। अन्य सिद्धांतों की अपेक्षा यह अधिक तर्क संगत एवं उपयोगी है, अत: 'स्वीट' का समन्वयवाद भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है।

1.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न।

अ) निम्नलिखित वाक्यों के नीचे दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1) भाषा शब्द संस्कृत की .... धातु से बना है।

क) भास् ख) भाषा ग) भाष् घ) लोच्

2) भाषा शब्द .... भाषा की भाष् धातु से बना है।

क) अंग्रेजी ख) कन्नड ग) पालि घ) संस्कृत

3) भाष् धातु का अर्थ है, ... या कहना ।

क) सुनना ख) लिखना ग) बोलना घ) गाना

4) ''जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है, उसे भाषा कहते हैं'' .... ने कहा है।

क) पाणिनि ख) पतंजलि ग) भामह घ) वामन

5) प्लेटो ने .... में विचार और भाषा के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

क) सोफिस्ट ख) सॉफिस्ट ग) नाट्यशास्त्र घ) तर्कशास्त्र

6) वेंद्रिए के अनुसार 'भाषा एक तरह का .... है।

क) दृश्य ख) संकेत ग) प्रतीक घ) सिद्धांत

7) भाषा मानव-उच्चारणावयवों से उच्चारित .... ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था है।

क) स्वर ख) व्यंजन ग) मानक घ) यादृच्छिक

8) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-समष्टियाँ .... होती हैं।

क) सार्थक ख) निरर्थक ग) स्वाभाविक घ) तर्कपूर्ण

9) .... के अनुसार 'ध्वन्यात्मक' शब्दों द्वारा 'विचारों' को प्रकट करना ही भाषा है।

क) प्लेटो ख) स्वीट ग) वेन्द्रिय घ) सपीर

10) वस्तुत: भाषा की दृष्टि से .... प्रतीक सर्वश्रेष्ठ हैं।

क) कर्णग्राह्य ख) नेत्रग्राह्य ग) स्पर्शग्राह्य घ) संकेतग्राह्य

11) भाषा वक्ता के विचारों को श्रोता तक पहुँचाती है, अर्थात वह .... का साधन है।

क) उच्चारण ख) विचार-विनिमय ग) ध्वनि-प्रतीकों घ) शब्द परिवर्तन

12) .... का अर्थ है, 'जैसी इच्छा हो' या 'माना हुआ' ।

क) सृजनात्मक ख) यादृच्छिक ग) अंतरणता घ) द्वैतता

13) भाषा निश्चित प्रयत्न के फलस्वरूप मनुष्य के .... से निःसृत ध्वनि समष्टि होती है।

क) उच्चारण अवयवों ख) मन ग) मस्तिष्क घ) कान

14) मानव-भाषा .... नहीं होती है।

क) परिवर्तनशील ख) अनुवंशिक ग) अर्जित संपत्ति घ) सामाजिक वस्तु

15) भाषा .... संपत्ति नहीं है।

क) अर्जित ख) चल ग) अचल घ) पैतृक

16) भाषा .... संपत्ति है।

क) अर्जित ख) पैतृक ग) चल घ) अचल

17) भाषा का कोई .... स्वरूप नहीं होता।

क) स्थायी ख) अस्थायी ग) अंतिम घ) चिरंतन

18) भाषा .... से सीखी जाती है।

क) अनुकरण ख) गाने ग) देखने घ) नाचने

19) भाषा आद्यंत .... वस्तु है।

अ) अर्जित ख) सामाजिक ग) पैतृक घ) धार्मिक

20) भारतीय पंडित .... को अपौरुषय मानते हैं।

क) वेदों ख) रामायण ग) महाभारत घ) गीता

21) संस्कृत भाषा के व्याकरण के मूलाधार .... के 14 सूत्र शिव के डमरु से निकले, ऐसा माना जाता है।

क) प्लेटो ख) पाणिनि ग) वामन घ) विश्वनाथ

22) .... को देवभाषा कहा जाता है।

क) पालि ख) प्राकृत ग) संस्कृत घ) अंग्रेजी

23) भाषाओं की उत्पत्ति के संबंध में .... सिद्धांत सबसे प्राचीन है।

क) दैवी उत्पत्ति ख) अनुकरण ग) संपर्क घ) समन्वय

24) अनुकरण सिद्धांत का विरोध .... ने किया।

क) रेणन ख) मेनन ग) रुसोा घ) हेस

25) धातु सिद्धांत को .... भी कहते हैं।

क) डिंग-डाँग वाद ख) समन्वय सिद्धांत ग) संपर्क सिद्धांत घ) अनुकरण सिद्धांत

26) अनुकरण सिद्धांत के अंतर्गत .... उपसिद्धांत रखे जाते हैं।

क) दो ख) तीन ग) चार घ) पाँच

27) संपर्क सिद्धांत का प्रतिपादन .... ने किया है।

क) प्रो. जी. रेवेज ख) प्रो. हेस ग) स्वीट घ) प्लेटो

28) समन्वय सिद्धांत का प्रतिपादन .... ने किया है।

क) स्वीट ख) प्रो. हेस ग) प्रा. जी. रेवेज घ) मैक्समूलर

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए।

1) 'भाष्' धातु का अर्थ क्या है?
2) प्लेटो ने भाषा संबंधी अपने विचार कौन से ग्रंथ में व्यक्त किए हैं?
3) 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है' ऐसा किसने कहा है ?
4) भाषा की दृष्टि से कौन-सा प्रतीक सर्वश्रेष्ठ है ?
5) कौनसे सिद्धांत के अनुसार भाषा की उत्पत्ति ईश्वर द्वारा हुई है?
6) कौनसी भाषा को देवभाषा कहते हैं?
7) बौद्ध लोग कौन-सी भाषा को मूल भाषा मानते हैं ?
8) जैन लोग कौन-सी भाषा को मूल भाषा मानते हैं?
9) धातु सिद्धांत की ओर प्रथमत: कौन से विद्वान ने संकेत किया था ?
10) धातु सिद्धांत को कौन से विद्वान ने व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया है?
11) धातु सिद्धांत को कौन से विद्वान ने मुद्रित रूप में विद्वानों के सामने रखा ?
12) अनुकरण सिद्धांत के अंतर्गत कौन-से तीन उपसिद्धांत का समावेश है?
13) किसने सभी चीजों को प्रकृति प्रदत्त माना है ?
14) समन्वय सिद्धांत का प्रतिपादन किसने किया है ?

15) संपर्क सिद्धांत का प्रतिपादन किसने किया है ?

16) प्रो. जी. रेवेज के अनुसार 'संपर्क' का अर्थ क्या है ?

1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ :

धातु - क्रिया का मूल रूप, क्रिया जिस ध्वनिसमुदाय से बनी है।

बपौती - पैतृक

व्यवहृत - व्यवहार में लाया गया, प्रचलित

बेकोस (bekos) - रोटी

अर्जित - अर्जन करना, सीखना

यादृच्छिक - इच्छा के अनुसार, माना हुआ

मानक - परिनिष्ठित, Standard

आत्माभिव्यक्ति - स्वयं को अभिव्यक्त करना

चेष्टा - प्रयत्न, प्रयास, कोशिश

गूँगा - मूक व्यक्ति, जो बोल नहीं सकता

सीमित -मर्यादित

प्रणाली - पद्धति

निसृत - निकलनेवाली, व्यक्त

सार्थक - अर्थपूर्ण

प्रेषणीय - संप्रेषण योग्य

पैतृक संपत्ति - पिता की संपत्ति अनायास जब पुत्र को मिलती है, उसे पैतृक संपत्ति कहा जाता है।

बपौती - बाप-दादा से मिलने वाली संपत्ति

1.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर :

1) भाष	2) संस्कृत	3) बोलना
4) पतंजलि	5) सोफिस्ट	6) संकेत
7) यादृच्छिक	8) सार्थक	9) स्वीट
10) कर्णग्राह्य	11) विचार-विनिमय	12) यादृच्छिक

13) उच्चारणावयवों

14) अनुवंशिक

15) पैतृक

16) अर्जित

17) अंतिम

18) अनुकरण

19) सामाजिक

20) वेदों

21) पाणिनि

22) संस्कृत

23) दैवी उत्पत्ति

24) रेणन

25) डिंग-डाँग वाद

26) तीन

27) प्रो. जी. रेवेज

28) स्वीट

आ) 1) 'भाष्' धातु का अर्थ बोलना या कहना है।

2) प्लेटो ने भाषा संबंधी विचार अपने सोफिस्ट ग्रंथ में व्यक्त किए हैं।

3) 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को व्यक्त करना ही भाषा है' ऐसा प्लेटो ने कहा है।

4) भाषा की दृष्टि से कर्णग्राह्य प्रतीक सर्वश्रेष्ठ हैं।

5) 'दैवी उत्पत्ति सिद्धांत' के अनुसार भाषा की उत्पत्ति ईश्वर द्वारा हुई है।

6) संस्कृत भाषा को देव भाषा कहते हैं।

7) बौद्ध लोग 'पालि' भाषा को मूल भाषा मानते हैं।

8) जैन लोन 'अर्धमागधी' भाषा को मूल भाषा मानते हैं।

9) 'धातु सिद्धांत' की ओर प्रथमत: 'प्लेटो' ने संकेत किया था।

10) 'धातु सिद्धांत' को जर्मन प्रोफेसर हेस ने व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया है।

11) धातु सिद्धांत को प्रोफेसर हेस के शिष्य डॉ. स्टाइन्थाल ने मुद्रित रूप में - विद्वानों के सामने रखा।

12) अनुकरण सिद्धांत के अंतर्गत ध्वन्यात्मक अनुकरण, अनुरणात्मक अनुकरण और दृश्यात्मक अनुकरण इन तीन उपसिद्धांतों का समावेश है।

13) प्लेटो ने सभी चीजों को प्रकृति प्रदत्त माना है।

14) समन्वय सिद्धांत का प्रतिपादन 'स्वीट' ने किया है।

15) संपर्क सिद्धांत का प्रतिपादन प्रो. जी. रेवेज ने किया है।

16) प्रो. जी. रेवेज के अनुसार संपर्क का अर्थ सामाजिक जीवों में आपसी संपर्क रखने की सहजात प्रवृत्ति है।

1.7 सारांश :

1) मनुष्य के विचार-विनिमय के तीन प्रमुख साधन हैं - स्पर्श-ग्राह्य, नेत्र-ग्राह्य और श्रवण-ग्राह्य। भाषा की दृष्टि से श्रवण-ग्राह्य प्रतीक ही सर्व श्रेष्ठ हैं।

2) अपने व्यापकतम रुप से भाषा वह साधन है, जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।

3) 'भाषा' शब्द को हम संकीर्ण अथवा संकुचित अर्थ में प्रयुक्त करते हैं। शास्त्रीय दृष्टि से 'भाषा' पर विचार करते समय हम उन सब संकेतों और संकेतजन्य अभिव्यक्तियों को ग्रहण नहीं करते, जो मनुष्य की वागिंद्रियों से न निकली हो।

4) भाषा विज्ञान की दृष्टि से भाषा उसे कहते हैं, जो बोली और सुनी जाती है और बोलना भी पशु-पक्षियों का नहीं, गूँगे मनुष्यों का भी नहीं, केवल बोल सकनेवाले मनुष्यों का होता है ।

5) भाषा को परिभाषित करने की कोशिश अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य विद्‌वानों ने की है। लेकिन इनमें से कोई भी परिभाषा परिपूर्ण नहीं है। केवल डॉ. भोलानाथ तिवारी की परिभाषा अधिक व्यापक है।

6) अलग-अलग जन समुदायों की भाषाएँ अलग-अलग होती हैं, किंतु कुछ ऐसे सामान्य तत्त्व हैं जो सभी भाषाओं में समान रूप में प्राप्त होते हैं, उन्हें भाषा की विशेषताएँ कहा जाता है। ये विशेषताएँ किसी एक भाषा पर लागू न होकर सभी भाषाओं पर लागू होती हैं। ये इस प्रकार है। (1) भाषा पैतृतक संपत्ति नहीं है। (2) वह अर्जित संपत्ति है। (3) भाषा आद्यन्त सामाजिक वस्तु है। (4) भाषा चिरपरिवर्तनशील है। (5) उसका अर्जन अनुकरणद्‌वारा होता है। (6) भाषा का एक स्थिर व मानक रूप होता है। (7) भाषा का कोई अंतिम स्वरूप नहीं है। (8) वह परंपरागत वस्तु है। (9) वह सामाजिक दृष्टि से स्तरित वस्तु है। (10) भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती है। (11) उसकी एक ऐतिहासिक सीमा होती है। (12) प्रत्येक भाषा की अपनी अलग संरचना होती है। (13) भाषा की धारा कठिणता से सरलता की ओर जाती है। (14) भाषा स्थूलता से सुक्ष्मता और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर बढ़ती है। (15) वह संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर बढ़ती है आदि।

7) भाषा की उत्पत्ति के संबंध में विद्‌वानों ने प्रत्यक्ष मार्ग के रूप में बारह और परोक्ष मार्ग तीन ऐसे कूल पंद्रह सिद्‌धांत प्रस्तुत किए हैं वे केवल अनुमान पर ही आधारित हैं। विद्‌वानों ने उत्पत्ति की संभावना के संबंध में अनुमान किया है और उसे ही सिद्‌धांत का नाम दे दिया है। प्रचलित सिद्‌धांतों में से कुछ सिद्‌धांत भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। इस दृष्टि से 'समन्वय सिद्‌धांत' महत्त्वपूर्ण है।

1.8 स्वाध्याय :

अ) दीर्घोत्तरी प्रश्न.

1) भाषा की परिभाषा देकर भाषा की विशेषताओं का विवेचन कीजिए।

2) भाषा की विशषषताओं को स्पष्ट कीजिए।

3) भाषा उत्पत्ति के दैवी उत्पत्ति सिद्धांत और अनुकरण सिद्धांत का विवेचन कीजिए।

4) भाषा उत्पत्ति के धातु सिद्धांत और अनुकरण सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

5) भाषा उत्पत्ति के दैवी उत्पत्ति सिद्धांत और धातु सिद्धांत को स्पष्ट कीजिए।

6) भाषा उत्पत्ति के अनुकरण सिद्धांत और संपर्क सिद्धांत का विवेचन कीजिए।

7) भाषा उत्पत्ति के संपर्क सिद्धांत और समन्वय सिद्धांत का विवेचन कीजिए।

आ) टिप्पणियाँ।

1) दैवी उत्पत्ति सिद्धांत

2) धातु सिद्धांत

3) अनुकरण सिद्धांत

4) संपर्क सिद्धांत

5) समन्वित (समन्वय) सिद्धांत

6) भाषा की परिभाषा

1.9 क्षेत्रीय कार्य :

1) भाषा की भारतीय एवं पाश्चात्य परिभाषाओं का अलग-अलग संकलन कीजिए।

2) भारतीय एवं पाश्चात्य भाषावैज्ञानिकों के नामों की सूची तैयार कीजिए।

3) समाज के भिन्न-भिन्न स्तरों के भाषकों की भाषा का निरीक्षण कर भाषा-स्तर भेद की सूची तैयार कीजिए।

4) बच्चों की भाषा सीखने की प्रक्रिया का निरीक्षण कीजिए।

5) पाठ्यक्रम में निर्धारित भाषा उत्पत्ति के सिद्धांतों के अतिरिक्त अन्य सिद्धांतों का भी अध्ययन कीजिए।

1.10 अतिरिक्त अध्यय के लिए।

1) भाषा विज्ञान : डॉ. भोलानाथ तिवारी
2) भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिंदी भाषा : डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना
3) भाषा विज्ञान : डॉ. सुधाकर कलावडे
4) हिंदी भाषा और भाषा विज्ञान : डॉ. ज्ञानराज गायकवाड
5) भाषा विज्ञान की भूमिका : डॉ. देवेंद्रनाथ शर्मा
6) हिंदी भाषा और विज्ञान : डॉ. अशोक के. शाह 'प्रतीक' प्रथम संस्करण : २००८
7) भाषा विज्ञान : डॉ. हणमंतराव पाटील
8) भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र : डॉ. कपिलदेव द्विवेदी
9) भाषा और भाषा विज्ञान : डॉ. तेजपाल चौधरी
10) भाषा विज्ञान के तत्त्व : डॉ. राजनारायण मौर्य

• • •

युनिट – 2

1) भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण।
2) भाषा के विविध रूप : बोली और परिनिष्ठित भाषा।
3) बोलियों के बनने के कारण।
4) बोली और भाषा में अंतर ।

2.1 उद्देश्य।

2.2 प्रस्तावना।

2.3 विषय विवेचन।

2.3.1 भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण।

2.3.1.1 आंतरिक या अभ्यंतर कारण।

2.3.1.2 बाहरी या बाह्य कारण।

2.3.2 भाषा के विविध रूप।

2.3.2.1 बोली।

2.3.2.2 परिनिष्ठित भाषा।

2.3.3 बोलियों के बनने के कारण।

2.3.4 बोली और भाषा में अंतर।

2.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न।

2.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ।

2.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर।

2.7 सारांश।

2.8 स्वाध्याय।

2.9 क्षेत्रीय कार्य।

2.10 अतिरिक्त अध्ययन।

2.1 उद्‌देश्य :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. भाषा की परिवर्तनशीलता से परिचित होंगे।
2. भाषा परिवर्तन (विकास) के आंतरिक और बाह्य कारण जान सकेंगे।
3. भाषा के मूलाधार तत्त्वों से परिचित होंगे।
4. भाषा के बोली और परिनिष्ठित भाषा इन रुपों से अवगत होंगे।
5. बोलियों के बनने के कारणों को समझ सकेंगे।
6 भाषा और बोली के अंतर से अवगत होंगे।

2.2 प्रस्तावना :

जीवित भाषा का यह अनिवार्य लक्षण है कि, वह हमेशा परिवर्तनशील होती है। यह बात सही है कि भाषा एक सामाजिक वस्तु है और अर्जित संपति होने के कारण वह परंपरागत भी है। पर इसके साथ यह भी तथ्य कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि अपनी ऐतिहासिक सीमा के भीतर वह निरंतर प्रवाहमान रहती है। यह कारण है कि किसी जीवित भाषा का अपना कोई अंतिम या पूर्ण रूप नहीं होता। दूसरी बात यह है कि प्रत्येक जीवित भाषा का अपना प्रयोक्ता होता है, जो मातृभाषा के रूप में उसका प्रयोग करता है। जिस भाषा का अपना कोई मातृभाषाभाषी वर्ग नहीं होता, वह न तो परिवर्तनशील होती है, और न ही जीवित। ऐसी भाषाओं का अपना अंतिम स्वरूप हो सकता है। उसके बारे में यह निर्देश देना संभव है कि उसका व्याकरण या उसकी संरचना अपरिवर्तनशील होती है। पर जिस भाषा का मातृभाषाभाषी समुदाय होता है वह भाषा 'भूत' और 'भविष्य' दोनों के दबाव से प्रभावित होती है, क्योंकि भाषा प्रयोक्ता एक ओर परंपरा से भाषा का अर्जन करता है और दूसरी तरफ सामाजिक वस्तु के रुप में उस भाषा में परिवर्तन का कारण भी बनता है। वास्तव में भाषा की चिरपरिवर्तनशीलता भाषा का विकास है। उसके पाँचो ही अंगो - ध्वनि, शब्द, रुप, अर्थ और वाक्य में यह परिवर्तन होता है। भाषा विद्‌वानों ने भाषा के अलग-अलग आधारों पर विभिन्न रुप स्वीकार किए हैं, परन्तु यहाँ हम केवल 'बोली' और 'परिनिष्ठित भाषा' इन्हीं दो महत्त्वपूर्ण रूपों का ही परिचय कर लेंगे। अत: हम भाषा परिवर्तनशीलता के क्या कारण है? भाषा के विविध रुप कौनसे हैं? बोली और परिनिष्ठित भाषा का क्या मतलब है? तथा उनमें क्या अंतर है? आदि प्रश्नों के संदर्भ में इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

2.3 विषय विवेचन :

भाषा चिरपरिवर्तनशील होती है। समाजविकास के साथ उसका भी विकास होता है। यह विकास भाषा के सारे अंगों-ध्वनि शब्द, अर्थ, रूप, वाक्य में होता है। इसके कई कारण हैं। यहाँ हम भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण और भाषा के विविध रूपों का क्रमश: अध्ययन करेंगे।

2.3.1 **भाषा की परिवर्तनशीलता के कारण :**

भाषा की परिवर्तनशीलता का मतलब ही भाषा विकास है। परिवर्तन यह सृष्टि का नियम है। यहाँ की हर वस्तु परिवर्तित होती है। भाषा भी उसे अपवाद नहीं है। भाषा का प्रयोक्ता और समाज परिवर्तित होता रहता है और उनके साथ-साथ भाषा भी परिवर्तित होती रहती है। भाषा के इस परिवर्तन को 'विकार' विकृति या 'विकास' आदि नामों से भी अभिहित किया गया है। भाषा का परिवर्तन ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य और अर्थ इन पाँचों ही अंगो में होता है, जिन्हें हम क्रमश: ध्वनि-परिवर्तन, शब्द-परिवर्तन रुप परिवर्तन, वाक्य परिवर्तन तथा अर्थ-परिवर्तन कहते हैं।

भाषा परिवर्तन या विकास पर बहुत पहले से किसी-न-किसी प्रकार से विचार हो रहा है। शब्दशास्त्र पर विचार प्रकट करनेवाले भारतीय आचार्यों में कात्यायन, पतंजलि, कैयट तथा काशिकाकार जयादित्य और वामन ये नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय हैं। यूरोप में इस विषय पर गंभीरता से और व्यवस्थित रुप से विचार प्रकट करनेवाले प्रथम व्यक्ति डैनिश विद्वान जे. एच्. ब्रेडसडॉर्फ हैं । इन्होंने ध्वनि परिवर्तन पर विचार करते समय भाषा परिवर्तन के कारण भी गिनाये थे। साथ-ही पाल, येस्पर्सन आदि विद्वानों ने भी भाषा परिवर्तन के कारणों को मुख्यत: दो वर्गों मे विभाजित किया है।

1) आंतरिक या अभ्यंतर कारण, 2) बाहरी या बाह्य कारण

2.3.1.1 **आंतरिक या अभ्यंतर कारण :**

परिवर्तन के कुछ कारण तो स्वयं भाषा में ही विद्यमान रहते हैं, जिन्हे 'अंतर्निहित' या 'अभ्यंतर' या भीतरी कारण भी कहा जाता है। इस वर्ग के अंतर्गत भाषा की अपनी स्वाभाविक गति के साथ-साथ अन्य कारण भी सम्मिलित होते हैं, जो प्रयोक्ता की शारीरिक क्षमता, अनुकरण की क्षमता, उच्चारण की प्रक्रिया, मानसिक स्तर, अर्थबोध की योग्यता आदि संबंधि स्थिति से संबंध रखते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि जो कारण भाषा की प्रकृति या स्वरूप से सम्बद्ध हैं, उन्हें 'आंतरिक' या 'अभ्यंतर' कहा जा सकता है। इस वर्ग के अंतर्गत आनेवाले कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

1) **प्रयत्न-लाघव :**

भाषा में परिवर्तन करने वाले अभ्यंतर कारणों में से प्रयत्न लाघव को सब से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। प्रयत्न लाघव का सीधा अर्थ है - 'श्रम की अल्पता' या 'मुख-सुख'। अर्थात अधिक श्रम न करना तथा कम-से-कम श्रम से अधिक-से-अधिक लाभ उठाना। मनुष्य की यह सहज प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति उसके जीवन के हर क्षेत्र में दिखाई देती है। काम पर देर से पहूँचने के बहुत से उदाहरण मिलते हैं, लेकिन काम खत्म करने में समय निष्ठा का बडी तत्परता से पालन किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि मनुष्य हमेशा यह चाहता है कि, अल्प श्रम में अधिक-से-अधिक लाभ हो। यही भावना भाषा के प्रयोग में भी काम करती है। और इसी कारण भाषा में बहुत हेर-फेर होता है। प्रयत्न लाघव में शब्दों को सरल बनाया जाता है, या सरलता के लिए कभी बड़ा, कभी छोटा बनाया जाता है। कभी-कभी कठिन संयुक्त व्यंजनों आदि

को सरल किया जाता है, जैसे कृष्ण का कन्हैया, कान्हा का किशन, भक्त का भगत, स्टेशन का टेसन, धर्म का धरम आदि सरल करके बोलने के प्रयास के फल है। अंग्रेजी में 'क्नो' (know) का उच्चारण 'नो' क्नाइफ (knife) का नाईफ, टाल्क (Talk) का टाक तथा एन.सी.सी., यू.एन.ओ. यु.एस.ए., यू.के. आदि संक्षिप्त रुप प्रयत्न लाघव के ही उदाहरण हैं।

भाषा में प्रयत्न लाघव या मुख-सुख कई प्रकार से लाया जाता है, जिनमें स्वर-लोप (जैसे अनाज से नाज, एकादश से ग्यारह), व्यंजन-लोप (जैसे स्थाली से थाली, जेष्ठ से जेठ, स्थल से थल, दुग्ध से दूध) आदि इसी का परिणाम है। स्वरागम (स्काऊट से इस्काउट, कर्म से करम, धर्म से धरम), व्यंजनागम (अस्थि से हड्डी) तथा कुछ अन्य (वधू से बहू) आदि सभी उदाहरण प्रयत्न लाघव के ही हैं कभी कभार सरलता के लिए कुछ शब्द छोटे कर लिए जाते हैं; जैसे उपाध्याय से ओझा और फिर केवल झा, पंडित जी से पंडी जी आदि। व्याकरण के संक्षेप चिन्ह का प्रयोग प्रयत्न लाघव की दृष्टि से ही किया जाता है।

2) बल (बलाघात) :

भाषा परिवर्तन में बल कई प्रकार से काम करता है। ध्वनि के क्षेत्र में प्राय: ऐसा होता है कि जिस ध्वनि या अक्षर पर बलाघात होता है, वह तो स्पष्ट और पूरी तरह उच्चारित होता है, किंतु आसपास की ध्वनियों पर बल कम हो जाता है, अत: कभी तो वह ह्रस्व हो जाती है, कभी अस्पष्ट और अंतत: कभी-कभी लुप्त भी हो जाती है। जो लोग बाजार, साहित्य, बारुद जैसे शब्दों में जा, हि, रु के उच्चारण पर अधिक बल देते हैं, उनके उच्चारण में यह शब्द क्रमश: बजार, सहित्य, बरुद हो जाते हैं। 'अभ्यंतर' से 'भीतर' के विकास में 'अ' का लोप; 'भ्यं' पर बल पडने से ही हुआ है।

3) अज्ञान / अशिक्षा :

बोलने वालों का अज्ञान भी कई रुपों में भाषा को प्रभावित करता है। विदेशी शब्दों का उच्चारण कुछ का कुछ हो जाता है। हर व्यक्ति उन शब्दों का ठीक उच्चारण तो जानता नहीं, अत: शब्दों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे-कलेक्टर का कलट्टर, टाईम का टेम या टैम, डझन का दर्जन, आगस्त का अगस्त, ट्रेझरी का तिजोरी आदि शब्द इसी का परिणाम है। तथा ईराणी शब्द 'हिन्दीक' (हिंदी) का परिवर्तन होते होते इंदिका, इंदिया, इंडिया हो गया। वस्तुत: इस प्रकार के परिवर्तन का आधार अनुकरण की अपूर्णता है किंतु अनुकरण की अपूर्णता भी वही होती है, जहाँ अज्ञान होता है। भाषा में अनपढ़ या अशिक्षित लोगों द्वारा मनसा, वाचा, कर्मना से पांडित्य सौंदर्यता जैसे शब्दों का प्रयोग भी अज्ञान-जनिक ही माना जाता है।

4) जान-बूझकर परिवर्तन :

कुछ वक्ता या भाषा-प्रयोक्ता, किसी शब्द को भाषा विशेष के अनुरूप या अपनी अभिव्यक्ति को वैयक्तिकता देने के लिए भाषा में विभिन्न स्तरों पर जान-बुझकर परिवर्तन कर देते हैं। मैक्स मूलर संस्कृत के प्रसंग में अपने आप को 'मोक्षमूलर' कहा करते थे। जयशंकर प्रसाद ने 'अलैक्जेंडर' का 'अलक्षेंद्र' कर दिया है। भाषा में यह परिवर्तन स्वाभाविक नहीं है। कभी-कभी उपयुक्त शब्द न मिलने पर लोग जान-बूझकर

किसी मिलते-जुलते शब्द का नए अर्थ में प्रयोग कर देते हैं। जैसे - Tragedy का त्रासदी, Comedy का कामदी, Academy का अकादमी, Nitrogen का नेत्रजन आदि परिवर्तन जान-बूझकर किए गए परिवर्तन हैं। ये परिवर्तन प्राय: शब्दों की ध्वनियों में किए जाते हैं। कभी-कभी वाक्य में भी जान-बूझकर किए गए परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। रूपों में भी नए-नए प्रयोग होते दिखाई देते हैं। स्वीकारना, नकारना, बतियाना आदि क्रिया रूप इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं। हिंदी में मात्र शब्द का प्रयोग पहले शब्दों के बाद होता था, अब पहले किया जाने लगा है; जैसे, 'विरोध मात्र' का 'मात्र विरोध'।

5) **सहज विकास (स्वयंभू परिवर्तन) :**

प्रयोग होते-होते हर वस्तु परिवर्तित होती है। यह प्रक्रिया अत्यंत सहज है। इसी कारण उपर्युक्त कारणों में से किसी के भी न होने पर भी भाषा विकसित या परिवर्तित होती रहती है। इसे 'स्वयंभू' परिवर्तन भी कहते हैं। यह परिवर्तन ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य और अर्थ सभी में होते रहते हैं। बहुत प्रयोग से शब्दों की आर्थिक शक्ति क्षीण हो जाती है। और अतिरिक्त शब्दों की आवश्यकता पडती है। कभी एक बार 'बढ़िया' शब्द पर्याप्त था। अब 'बहुत बढ़िया' शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह 'अति परिचय से अवज्ञा' वाली बात है। इसीलिए कलाकार पुराणे घिसे-पिटे शब्दों को छोडकर; या तो पुराणे साहित्य से शब्द लेते हैं या कभी-कभी नए शब्द गढ़ लेते हैं। सत्य का सच, गर्दभ का गधा, महिषी का भैंस जैसे उदाहरणों में कुछ परिवर्तन तो सकारण है तथा कुछ परिवर्तन इस प्रकार के सहज या स्वयंभू हैं।

6) **सादृश्य :**

यह कारण आंतरिक भी हो सकता है और बाह्य भी। किसी दूसरी भाषा के सादृश्य पर परिवर्तन बाह्य कारण है, तो भाषा में किसी एक शब्द के आधार पर दूसरे में परिवर्तन आंतरिक कारण है। एक ही भाषा भाषी जब दूसरी भाषा सीखकर बोलता या लिखता है तो प्राय: उसकी मातृभाषा उसकी नवभाषा अभिव्यक्ति को प्रभावित करती है। जैसे शहर से शहराती (देहाती का सादृश्य) आधा से अधूरा (पूरा का सादृश्य), कर से करा (पढ़ा, लिखा, बोला, चला आदि का सादृश्य) पर आधारित है।

ध्वनि के क्षेत्र में भी सादृश्य के कारण परिवर्तन होते हैं। यहाँ सादृश्य कभी-कभी लौकिक व्युत्पति के रूप में काम करता है। 'रायबरेली' से सादृश्य देख कर बहुत से अनपढ़ लोग लायब्रेरी को 'लायबरेली' कहते हैं। ऐसे ही स्वर्ग के सादृश्य पर नरक को लोग 'नर्क' कहते हैं। कबीर ने निर्गुण के आधार पर सगुण का सर्गुण और पिंगला के आधारपर इडा का 'इंगला' कर दिया है। दु:ख के सादृश्य पर आधारित प्राचीन साहित्य में 'सुक्ख' शब्द मिलता है। संस्कृत में मूल शब्द 'एकदशा' था, लेकिन द्वादश के सादृश्य पर एकादश हो गया। इस प्रकार सादृश्य के कारण भाषा में परिवर्तन होता है।

7) **भावातिरेक :**

मनुष्य एक समाजशील प्राणी है। समाज में रहते समय वह हमेशा अपने विचारों का आदान-प्रदान करता है। विचारों के साथ उनमें भावुकता भी दिखाई देती है। इसी कारण अपना जीवन यापन करते समय

विशेष परिस्थिति में वह भावुक होता है। इसी कारण इसे 'भावावेश' भी कहा जाता है। भावातिरेक या भावावेश की यह स्थिति उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा पर प्रभाव निर्माण करती है, जिससे भाषा में परिवर्तन होता है। मनुष्य में प्रेम, क्रोध, शोक, भय, जुगुप्सा, विस्मय आदि भावों के अतिरेक (अधिक्य) से शब्दों का रुप बदल जाता है। जैसे बाबू का बबुआ, बच्चा का बचवा, राजा का राजू या बेटी का बिटिया आदि रुपांतर भावातिरेक या भावावेश के कारण ही हो जाते हैं।

8) **मानसिक स्तर :**

मनुष्य जिस समाज में रहता है, उस समाज के भी अलग-अलग स्तर हमें दिखाई देते हैं। इस सामाजिक स्तर की तरह मनुष्य के विभिन्न मानसिक स्तर भी होते हैं। इसी मानसिक स्तर की विभिन्नता का प्रभाव उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा पर दिखाई देता है। बोलने वालों के मानसिक स्तर में परिवर्तन होने से विचारों में भी परिवर्तन होता है, तो उसे प्रयुक्त करने के ढंग में भी परिवर्तन होता है। स्वाभाविक रूप से उसका असर भाषा पर भी पडता है। जिस तरह सब की आकृति एक नहीं होती, उसी तरह प्रकृति भी एक जैसी नहीं होती। जैसे; कोई तीव्र बुद्धि का होता है तो कोई मंद बुद्धि का। इसी कारण भाषा पर मानसिक स्तर का प्रभाव दिखाई देता है, जिससे भाषा परिवर्तित होती है।

9) **जातीय मनोवृत्ति :**

भाषा परिवर्तन के जैसे अन्य कारण बताएँ जाते हैं, उसी तरह कुछ विद्वानों ने जातीय मनोवृत्ति को भी एक कारण माना है। विद्वानों के मतानुसार प्रत्येक जाति की विशिष्ट मनोवृत्ति होती है। वह एक-दूसरे से भिन्न होती है। समाज में कोई जाति श्रेष्ठ कहलाई जाती है, तो कोई दूसरी जातियों से हीन। यदि ऐसा नहीं होता तो सभी जातियों की सांस्कृतिक, बौद्धिक और साहित्यिक उपलब्धियाँ एक जैसी होती। काव्य, तत्वज्ञान, संगीत, कला आदि का समान विकास सभी जातियों में नहीं हुआ है। इसका कारण है जातियों की मनोवृत्ति या मानसिक अवस्था का भेद। यह मनोवृत्ति भाषा में भी अभिव्यक्त होती है। जो जाति जैसे रहती है, वैसे उनकी भाषा बन जाती है। जिन जातियों में कोमलता और स्निग्धता है, उनकी भाषा मधुर होती है और जिन जातियों में इन गुणों का अभाव होता है, उनकी भाषा कठोर होती है। जैसे, जर्मन जाति की कठोरता और सबलता का प्रमाण उनकी भाषा में प्रतिबिंबित है। इसी तरह फ्रांसीसियों की कोमलता और कलाप्रियता के कारण उनकी भाषा मधुर बन गई है।

कुछ विद्वान इस बात को नहीं मानते हैं कि जातीय मनोवृत्ति के कारण भाषा में परिवर्तन होता है। उनका तर्क है कि प्राकृतिक रुप से मनुष्य की मनोवृत्ति में कोई भेद नहीं होता है और न ही कोई जाति मानसिक दृष्टि से श्रेष्ठ होती है, न हीन। बाह्य परिस्थितियों के प्रभाव से किसी जाति की प्रगति होती है, किसी की नहीं। यही कारण है कि एक भाषा दो या अधिक जातियों में प्रचलित होकर भी वह दो या अधिक प्रकार से विकसित होती है।

10) **अधूरा अनुकरण :**

किन्हीं दो व्यक्तियों का शारीरिक संगठन एक जैसा नहीं होता। यही भिन्नता जैसे बाहर होती है, वैसे

ही भीतर भी होती है। किसी व्यक्ति की आवाज सुरीली होती है, किसी की कर्कश। आवाज की इस भिन्नता का कारण है, वागेंद्रियों की भिन्नता। इसी भिन्नता के कारण शब्दों के उच्चारण या अनुकरण में भिन्नता आ जाती है। इसलिए भाषा में परिवर्तन होता है। कुछ लोग दूसरों का अधूरा अनुकरण कर लेते हैं। शारीरिक भिन्नता, ध्यान की कमी तथा अज्ञान एवं अशिक्षा के कारण अनुकरण अधूरा रह जाता है। जैसे-रेल्वे गार्ड को 'गाड' और पोस्ट कार्ड को पोस्ट कारद कहते हैं। लॉर्ड साहब का 'लाटसाहब' रिपोर्ट का 'रपट', प्लाटून का 'पलटन' ये सभी अधूरे अनुकरण के उदाहरण हैं। इनमें ध्वनियों का सम्यक अनुकरण नहीं होता. जिससे भाषा में परिवर्तन होता है। अनुकरण की यह अपूर्णता क्रमश: एक पीढ़ी से दूसरी पिढ़ी में बढ़ती जाती है। इसी कारण कई पीढ़ियों के बाद भाषा में परिवर्तन दिखाई देने लगता है।

:2.3.1.2 **बाहरी या बाह्य कारण :**

जो कारण भाषा को बाहर से प्रभावित करते हैं, उन्हें बाहरी या बाह्य कारण कहा जाता है। ये कारण वातावरण सापेक्ष होते हैं। इस वर्ग के अंतर्गत आनेवाले मुख्य कारण इस प्रकार हैं –

1) **भौगोलिक प्रभाव :**

भाषा किसी विशेष भू-भाग में बोली जाती है और वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियाँ अनेक प्रकार से उसे प्रभावित करती हैं, या उसके विकास में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उसके पक्ष में या विपक्ष में काम करती हैं। कोई प्रदेश आक्रमण करने योग्य या सांस्कृतिक, व्यापारिक, धार्मिक संपर्क स्थापित करने योग्य है या नहीं यह बहुत कुछ उसकी भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करता है। उसकी संपन्नता-असंपन्नता उसी पर आधारित होती है और भाषा का भी इनसे काफी संबंध होता है। बाह्य संपर्क से भाषा सभी क्षेत्रों में अन्य भाषाओं से प्रभावित हो सकती है और भौगोलिक वातावरण के अनुसार ही किसी भाषा का शब्द-समूह निश्चित होता है। हिंदी की बोलियाँ कृषि विषयक शब्दावली से बहुत सम्पन्न हैं। इस के विपरित इंग्लैंड की भाषा में इस विषय की संपन्नता संभव नहीं है।

आर्य जब रेगिस्तानी भाषा से परिचित नहीं थे, तब उष्ट्र का प्रयोग विशेष प्रकार के भैंसे के लिए होता था, किंतु रेगिस्तानी से परिचित होने के बाद इसका अर्थ ऊँट हो गया। अंग्रेजी में 'कॉर्न' का सामान्य अर्थ गल्ला है, किंतु यह शब्द जब अंग्रेजों के साथ अमेरिका पहुँचा। वहाँ 'मक्का' की पैदावार विशेष होती थी। अब इस शब्द के अर्थ में थोडा परिवर्तन हुआ और 'कॉर्न' शब्द 'मक्का' का वाचक हो गया। मैदानी प्रदेशों में भाषा दूर-दूर तक एक ही रहती है, किंतु पहाडी भागों में आवागमन की असुविधा के कारण भाषा के छोटे-छोटे रूप विकसित हो जाते हैं। इस प्रकार भाषा परिवर्तन में भौगोलिक प्रभाव कारण बन जाता है।

2) **ऐतिहासिक प्रभाव :**

इतिहास की घटनाएँ भी भाषा को प्रभावित करती हैं। जब मध्ययुगीन कालखंड में मुसलमान भारत में आए और बस गए; इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय भाषाओं का शब्द-समूह बहुत परिवर्तित हो गया। हिंदी में अरबी, फारसी, तुर्की, पश्तों शब्दों की संख्या लगभग 6000 से अधिक है। इसी प्रकार युरोपीयों

ने हमारे इतिहास को प्रभावित किया और उनके संपर्क से भाषाएँ भी प्रभावित हो गई। हिंदी में अंग्रेजी के लगभग 3000 से अधिक शब्द हैं। शब्द-समूह के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी यह प्रभाव पडता है। हिंदी ने इन्हीं ऐतिहासिक कारणों से क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ऑ इन छ: नई ध्वनियों को ग्रहण किया है। उसकी वाक्य रचना भी फारसी तथा अंग्रेजी से काफी प्रभावित है। फारसी ने तो एक सीमा तक रूप रचना को भी प्रभावित किया है। जैसे, मकान से मकानात, कागज से कागजात आदि। जब आर्य भारत में आए और द्रविड तथा मुंडा लोगों से उनका संपर्क हुआ, तब ध्वनि, रुप-रचना, शब्द-समूह, तथा वाक्य गठन के क्षेत्र में एक ओर संस्कृत तथा उससे विकसित भाषाएँ प्रभावित होकर परिवर्तित हुई और दूसरी ओर द्रविड तथा मुंडा भाषाएँ प्रभावित होकर परिवर्तित हुए बिना नहीं रह सकीं। इसी प्रकार इतिहास भी भाषा को प्रभावित करता है।

3) **सांस्कृतिक प्रभाव :**

दो भाषा-भाषियों में सांस्कृतिक संबंध के कारण भी उनकी भाषा पर प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव प्राय: शब्द-भंडार के क्षेत्र में पडता है, जिससे भाषा का शब्द-समूह परिवर्तित होता है। समय-समय पर भारत का अरबी, चीनी, जापानी, ईरानी तथा पूर्वी एशिया के लोगों से सांस्कृतिक संबंध रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप शब्दों का आना-जाना चलता रहा। सांस्कृतिक संबंधों में प्राय: वही भाषा अधिक प्रभावित करती है, जिसके बोलने वाले सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक श्रेष्ठ होते हैं। यही कारण है कि उपर्युक्त लोगों की भाषाएँ संस्कृत को प्रभावित करने की तुलना में संस्कृत से अधिक प्रभावित हुई। इंदोनेशिया तथा मलेशिया आदि देशों में संस्कृत के अनेकानेक शब्द आज भी तद्भव रुप में प्रयुक्त हो रहे हैं।

सांस्कृतिक प्रभाव के कारण ही स्वयं भाषा-भाषियों की अपनी संस्कृति और सभ्यता भी समय के साथ बदलती रहती है। और भाषा भी उसके साथ परिवर्तन के पथ पर बढ़ती जाती है। खान-पान, खेल-कूद, चिकित्सा, शिक्षा आदि के क्षेत्र में भी इस प्रकार के अनेक परिवर्तन हुए हैं, जिनका प्रभाव भाषा के शब्द-समूह पर पड़ा है। बहुत प्रयोग के बाद कुछ विशेष प्रकार के शब्द सभ्य और संस्कृत समाज के लिए अप्रयोग्य माने जाने लगते हैं। अंग्रेजी में 'लैट्रिन-युरिनल' के स्थान पर 'बाथरूम' शब्द आया, अब वह भी गया और 'ट्वायलेट' शब्द आया। आज इसका भी परिवर्तन होकर यह शब्द 'वाश-रुम' के रूप में प्रयुक्त होने लगा है। वस्तुत: बोलने वालों की सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ उनकी भाषा का भी विकास होता है।

4) **साहित्यिक प्रभाव :**

साहित्यिक कारणों से भी भाषा में परिवर्तन होता है। छायावाद ने तत्कालीन साहित्यिक भाषा के शब्द-समूह को संस्कृतनिष्ठ बना दिया। बाद में प्रगतिवादी आंदोलन ने हिंदी भाषा को पुन: धरती की ओर मोडा और शब्द-समूह में संस्कृत शब्द कम होते गए तथा दैनिक जीवन में शब्दों का व्यवहार बढ़ता गया। यूरोपीय साहित्य के संपर्क ने सन् 1640 ई. के बाद हिंदी भाषा की अभिव्यक्ति को विशेषत: काव्य क्षेत्र को अधिक प्रभावित किया। प्रयोगवादी तथा नई कविता इसका प्रमाण है। नए प्रतीक, नई अभिव्यंजना,

भाव-भंगिमा ने भाषा को इतना प्रभावित किया है कि वह बहुत दिनों के लिए अबोधगम्य बन गई है। कुंठा, झेला हुआ यथार्थ, भोगा हुआ सत्य जैसे बहुत-से प्रयोगों की आवृत्ति बढ़ गई है। जापानी काव्य 'हायकू' के प्रभाव से भारतीय काव्य साहित्य में हायकू की प्रवृत्ति निर्माण हो रही है। छायावादी काव्य ने खडीबोली की रूक्षता को दूर करते हुए पेशलता और मधुरता को प्रतिष्ठित करने का और ब्रजभाषा के समकक्ष खडीबोली को काव्यभाषा बनाने का काम किया है।

5) **सामाजिक प्रभाव :**

समाज परिवर्तन भी भाषा को प्रभावित करता है। जापान के सामंती युग में आदर-अनादर आदि के आधार पर क्रिया, सर्वनाम, संज्ञा, विशेषण आदि के कई स्तरों के प्रयोग चलते थे। राजा के लिए प्रयुक्त भाषा या राजा द्वारा प्रयुक्त भाषा और ही होती थी। अब यह अंतर धीर-धीरे लुप्त हो रहा है। हिंदी प्रदेश में भी जहाँपनाह, अन्नदाता, हुजूर, सरकार आदि शब्दों का प्रयोग संबोधन के लिए किया जाता था। सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होने से अब ये बहुत कम हो गए हैं। सामाजिक परंपराओं के समाप्त होने से दंडवत, साष्टांग प्रणाम जैसे प्रयोगों का स्थान नमस्कार, नमस्ते लेते जा रहे हैं। वस्तुत: भाषा समाज में उत्पन्न हुई है और समाज में प्रयुक्त होती है। अत: समाज में परिवर्तन के साथ उसमें परिवर्तन सहज ही है। इसीलिए भाषा विज्ञान की समाज भाषा विज्ञान नामक एक नई शाखा विकसित हो गई है। जिसमें समाज और भाषा के संबंध तथा तद्नुरुप परिवर्तन आदि बातों पर गहराई से विचार किया जाता है।

6) **राजनीतिक प्रभाव :**

समाज में रहता हुआ मनुष्य उसमें घटित होनेवाली हर एक घटना से प्रभावित होता है। राजनीति के कारण शासन, समाज आदि में परिवर्तन के साथ-साथ भाषा में भी परिवर्तन होता है। प्राय: यह देखा गया है कि जब आक्रमणकारी किसी स्थान-विशेष पर आक्रमण करते हैं, तो उस स्थान-विशेष की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करने के साथ-साथ भाषा को भी प्रभावित करते हैं। आक्रमणकारियों की भाषा से उस स्थान की भाषा प्रभावित होकर परिवर्तित होती है। आक्रमण के समय शब्दों का यह आदान-प्रदान एकांगी नहीं होता, तो दोनों भाषाएँ एक-दूसरे से प्रभावित होती है। भारत में संस्कृत भाषा के प्रचार एवं प्रसार के समय जब हुण आदि जातियों का भारत में आगमन हुआ और यहाँ की राज्य-सत्ता इनके हाथों में आ गई तब संस्कृत के शब्दों में परिवर्तन होने लगा। उदा. धर्म, कर्म, हस्ति जैसे शब्द 'धम्म', 'कम्म', हस्थि इन रूपों में परिवर्तित हो गए। जब मुसलमान आक्रमणकारियों के हाथों में राज्य-सत्ता आई तो उनके कारण भी हिंदी भाषा में परिवर्तन हुआ। जैसे-चंद्र को 'चन्दर' प्रसाद को परसाद 'रत्न को रतन' यह परिवर्तन राजनीतिक प्रभाव का द्योतक है।

7) **धार्मिक प्रभाव :**

जब एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्मानुयायियों के संपर्क में आते हैं तब उन दोनों में धार्मिक विचारों का आदान-प्रदान होता है। साथ में वे एक-दूसरे के धार्मिक शब्दों का प्रयोग करने लगते हैं। इस प्रकार एक भाषा के द्वारा दूसरे भाषा-भाषियों के धार्मिक शब्दों को अपनाने के कारण उसमें परिवर्तन आ जाता

है। जब वैदिक धर्म मानने वाले आर्यों का संपर्क यूनानियों से हुआ, तो यूनान देश के लोगों ने वैदिक देवताओं के नाम ग्रहण किए; जैसे, 'देव' को 'थेओस' 'असुरमेघस', 'अहुरमज्द' कहा जाने लगा। इसी तरह संस्कृत के शब्दों को जब अवेस्ता भाषा ने ग्रहण किया तब 'असूर' का 'अहूर', 'सोम' का 'होम', 'सिन्धु' का 'हिन्दु' जैसे परिवर्तन आ गए। हिंदी भाषा इस्लाम, ईसाई धर्म प्रचारकों के संपर्क में आई तो हिंदी में 'अल्लाह', 'मस्जिद', गिरजा' शब्दों का समावेश हुआ। इस प्रकार धार्मिक प्रभाव के कारण भाषा में परिवर्तन आता है।

8) **वैयक्तिक प्रभाव :**

भाषा के विकास में समाज का तो महत्त्व है ही, किंतु भाषा पर व्यक्ति का प्रभाव भी पड़ता है। कभी-कभी ऐसे युगपुरुष उत्पन्न होते हैं, जो अपने व्यक्तित्व से भाषा की गतिविधियों को बहुत दूर तक प्रभावित कर देते हैं। तुलसी ने अपनी रचनाओं में संस्कृत शब्दों का प्रयोग बहुत किया। जिसकी देखा-देखी तत्कालीन अन्य कई कवियों की शब्दावली संस्कृतनिष्ठ हो गई। हिंदी की हिंदुस्थानी शैली को स्पष्ट रूप से विकसित करने का श्रेय महात्मा गांधीजी को दिया जाता है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज द्वारा ऐसी जागृति पैदा की थी कि, जहाँ-जहाँ आर्य समाज का प्रचार बढ़ता रहा, वहाँ संस्कृत ने सामान्य भाषा को प्रभावित किया। मुख्यत: शब्द-समूह के संदर्भ में, व्यक्ति नामों के क्षेत्र में ओमप्रकाश, ओमवती, वेदप्रकाश, वेद, वेदवृत्त जैसे नामों के बहुप्रचार का श्रेय उन्ही को दिया जाता है। सन् 1600 ई. से सन् 1620 ई. के बीच आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी को अधिक प्रभावित किया। तत्त्वत: उसे अव्यवस्था के दलदल से निकाल कर व्यवस्था के मार्ग पर आसीन करने का श्रेय आचार्य द्विवेदी को ही दिया जाता है। इस प्रकार भाषा के विकास में महान व्यक्तियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

9) **वैज्ञानिक प्रभाव :**

विज्ञान की विविध शाखाओं ने विगत दो शताब्दियों से बहुत प्रगति की है, जिसके कारण असंख्य नई वस्तुओं और नए तत्त्वों का आविष्कार हुआ है। उन वस्तुओं और तत्त्वों के नामकरण की आवश्यकता से हजारों नए शब्द गढ़ने पडे हैं। जिनसे भाषा में परिवर्तन भी हुआ और वह अधिक समृद्ध हो गई है। यह वैज्ञानिक शब्दावली आधुनिक युग की और विज्ञान की देन है। विज्ञान ने मनुष्य को ही नहीं, बल्कि भाषा को भी रूपांतरीत कर दिया है। अत: भाषा संबंधी परिवर्तन के कारणों पर विचार करते समय विज्ञान की उपेक्षा उचित नहीं है। सामान्यत: जितने शब्द शताब्दियों से नहीं बन पाते, उतने वर्षों में बन गए हैं। अत: हिंदी भाषा ने भी विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का समुचित ज्ञान प्राप्त करने के लिए पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया है। जैसे - 'एटम' का 'परमाणु', 'कंपाउंड' का 'यौगिक', 'वेपर' का 'बाष्प' आदि।

अत: हम कह सकते हैं कि, प्रत्येक प्रभाव की मात्रा सदा एक ही नहीं होती; कभी वह लक्षित होती है, और कभी अलक्षित भाव से भाषा को प्रभावित करती है किंतु वह भाषा को अवश्य प्रभावित करती है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि तत्काल वह परिवर्तन नहीं दिखाई देता किंतु समय पाकर वह भाषा

परिवर्तन दिखाई पडता है। इस प्रकार भाषा परिवर्तन के आंतरिक और बाह्य मुख्य प्रयोजक कारण है। जिनसे भाषा परिवर्तन (विकास) हमें स्पष्ट रूप से दिखाई पडता है।

2.3.2 भाषा के विविध रुप :

- **प्रस्तावना :**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह समाज में रहता है और सामाजिक संरचना के अनुसार वह अपने आपको ढालता रहता है। गाँव का रहनेवाला आदमी जब तक वहाँ रहता है, तब तक वहाँ के रंग-ढ़ंग का अनुकरण करता है और जब वही आदमी शहर जाता है, तब वही शहरी वातावरण से प्रभावित होकर वहाँ के अनुसार अपने आप को ढ़ाल लेता है। इसी तरह भाषा के विविध रुपों की कल्पना भी विभिन्न परिस्थितियों तथा परिवेशों में मनुष्य के द्‌वारा धारण किए गए उन्हीं रुपों से की जा सकती है। जैसे, एक ही आदमी पढ़ाते समय अध्यापक, गाना गाते समय गायक, गीत लिखते समय गीतकार, कविता करते समय कवि, खेत में काम करते समय कृषक, खेलते समय खिलाडी, नाव चलाते समय मल्लाह, रोगियों का उपचार करते समय डॉक्टर, इसी तरह नाई, धोबी, कहार, मोची, बनिया आदि नामों से जाना जाता है। उसी तरह हिंदी ने भी संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश से गुजरने के पश्चात अपनी एक पहचान बना ली है। वह अपने गुणों एवं विशेषताओं के कारण अनेक नामों से जानी-पहचानी जाती है। संसार में भाषा के विविध रूप या विभिन्न प्रकार मुख्यत: निम्नांकित आधारों पर बनते हैं -

- **भाषा भेद के मूलाधार तत्त्व :**

भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा-भेद के जो मूलाधार तत्त्व बताए हैं, वे निम्न प्रकार हैं -

1) **इतिहास के आधार पर :**

इतिहास के आधार पर मूल भाषा (जैसे-भारोपीय), प्राचीन भाषा (जैसे-संस्कृत, ग्रीक आदि), मध्ययुगीन भाषा (जैसे-पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि) तथा आर्वाचीन या आधुनिक भाषा (जैसे-मराठी, हिंदी, अंग्रेजी) आदि भेदों का उल्लेख किया जाता है।

2) **भूगोल के आधार पर :**

व्यक्तिबोली, स्थानीय बोली, उपबोली, बोली भाषा, आदि रुपों का आधार भूगोल है। इसके अतिरिक्त विभिन्न शहरों की भाषा; जैसे, बनारसी, विभिन्न क्षेत्रों की भाषा; जैसे, ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि; किसी देश के विभिन्न प्रदेशों की भाषा; जैसे, पंजाबी, गुजराती, बंगाली, असमी आदि; विभिन्न देशों की भाषा; जैसे, चीनी, जपानी, अरबी, फ्रांसीसी आदि; इसी प्रकार द्‌वीप, तहसील, जिला तथा अन्य भौगोलिक इकाईयों के आधार पर भाषा के रूप हो सकते हैं।

3) **निर्माता के आधार पर :**

निर्माता के आधार पर भाषा के सहज भाषा, बोलचाल की भाषा (जैसे-मराठी, हिंदी, अंग्रेजी आदि भाषाएँ) तथा कृत्रिम भाषा आदि भेद किए जाते हैं । (जैसे-एस्पेरैंतो या इडो आदि, जिसे एक या कई लोगों

ने मिलकर कृत्रिम रूप से बनाया हो)। कृत्रिम भाषा के दो उपभेद हैं - सामान्य भाषा - (जैसे-एस्पेरैंतो) और गुप्त भाषा (चोरों, डाकुओं, दलालों, सेना, मित्र-मंडली की भाषा)।

4) प्रयोग के आधार पर :

प्रयोग के आधार पर भाषा के कई रूप होते हैं; जैसे - राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा, साहित्यिक भाषा, व्यावसायिक भाषा, जातीय भाषा, बोलचाल की भाषा आदि।

5) **मानकता या शुद्धता के आधार पर :**

मानकता या शुद्धता के आधार पर भाषा का विविध रूपों में विभाजन किया जाता है। जैसे - शुद्ध भाषा, अशुद्ध भाषा, मानक या परिनिष्ठित भाषा, अमानक भाषा, अपभाषा आदि।

6) **श्लीलता के आधार पर :**

श्लीलता के आधार पर भाषा के श्लील भाषा, अश्लील भाषा आदि रूप किए जाते हैं।

7) **प्रचलन के आधार पर :**

प्रचलन के आधार पर मृतभाषा, जीवित भाषा, प्रचलित भाषा, अप्रचलित भाषा, अल्पप्रचलित भाषा आदि रूपों में विभाजन किया जाता है।

8) **मिश्रण के आधार पर :**

मिश्रण के आधार पर मिश्रित भाषा और अमिश्रित भाषा ऐसे दो रूपों में विभाजन किया जाता है।

9) **बोधगम्यता के आधार पर :**

बोधगम्यता के आधार पर भाषा को चार रूपों में विभाजित किया जाता है। जैसे - क्लिष्ट भाषा, सरल भाषा, कुट भाषा, गुप्त भाषा आदि।

10) **श्रवण के आधार पर :**

श्रवण के आधार पर भाषा का मधुर भाषा और कर्कश भाषा तथा कर्ण कटु भाषा आदि रूपों में विभाजन किया जाता है।

11) **रचना के आधार पर :**

रचना के आधार पर भाषा का अयोगात्मक भाषा और संयोगात्मक भाषा इन दो रूपों में विभाजन किया जाता है।

इस प्रकार भिन्न भिन्न आधारों पर भाषा के विविध रूप देखने मिलते हैं, तथापि यहां केवल 'बोली' और 'परिनिष्ठित भाषा' इन दो ही रूपों का सामान्य परिचय किया जा रहा है।

2.3.2.1 बोली (Dialect) :

बोली भाषा की लघुतम इकाई है। बोली शब्द की व्युत्पत्ति 'बोलना' धातु से हुई है। बोली शब्द अंग्रेजी Dialect (डायलेक्ट) का प्रतिशब्द है। भाषा विज्ञानविद बोली के लिए 'विभाषा' या 'उपभाषा' शब्द का भी प्रयोग करते हैं। एक व्यक्ति की भाषा को 'व्यक्तिबोली' कहा जाता है। इसी तरह बहुत-सी बोलियों का सामूहिक रूप 'उपबोली' या 'स्थानीय बोली' (Sub-Dialect or Local Dialect) कहलाता है। जिसे हम बोली कहते हैं, वह बहुत-सी मिलती-जुलती उपबोलियों का सामूहिक रूप है और बोलियों का मिलता-जुलता सामूहिक रूप 'भाषा' कहलाता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि, एक भाषा क्षेत्र में कई बोलियाँ होती हैं। जैसे हिंदी के क्षेत्र में खडीबोली, अवधी, ब्रज आदि बोलियाँ हैं और एक बोली में कई उपबोलियाँ होती हैं। जैसे-बुन्देली बोली के अंतर्गत लोधान्ती, राठौरी तथा पँवारी आदि। हिंदी के कुछ भाषा वैज्ञानिक बोली के लिए 'विभाषा', 'उपभाषा' या 'प्रांतीय भाषा' शब्द का प्रयोग करते हैं।

बोली का प्रयोग क्षेत्र सीमित होता है, तथा उसमें साहित्यिकता का अभाव होता है; इसी कारण 'भाषा विज्ञान कोश' में इसकी परिभाषा इस प्रकार दी है

"Popular Speech, mainly that of the illiterate classes, Specially local dialect of the lower social status."

जिसका अर्थ है – ''निम्न सामाजिक स्तर के मुख्य रूप से अशिक्षित वर्गों द्वारा प्रयुक्त एक स्थान विशेष की भाषा को बोली कहते हैं।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार – ''बोली किसी भाषा के एक ऐसे सीमित क्षेत्रीय रूप को कहते हैं जो ध्वनि, रूप, वाक्य-गठन, अर्थ, शब्द-समूह तथा मुहावरें आदि की दृष्टि से उस भाषा के परिनिष्ठित तथा अन्य क्षेत्रीय रुपों से भिन्न होता है, किंतु इतना भिन्न नहीं कि अन्य रूपों के बोलनेवाले उसे समझ न सके। साथ ही जिसके अपने क्षेत्र में कहीं भी बोलने वालों के उच्चारण, रूप-रचना, वाक्य-गठन, अर्थ, शब्द-समूह तथा मुहावरें आदि में बहुत स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण भिन्नता नहीं होती।'' इस परिभाषा द्वारा तिवारी जी ने भाषा आर बोली में विशेष अंतर नहीं किया है।

अत: हम कह सकते हैं कि ''एक भाषा के अंतर्गत जब अलग-अलग कई रूप विकसित हो जाते हैं, तो उन्हें 'बोली' कहा जाता है। भाषा के स्थानीय भेद से प्रयोग-भेद में जो अंतर पडता है, उसी के आधार पर बोलियों का निर्माण होता है। जब तक बोलियों को साहित्य, धर्म, व्यापार या राजनीति के कारण महत्त्व न प्राप्त हो या जब तक पडोसी बोलियों से उसे भिन्नता करनेवाली उसकी विशेषताएँ इतनी न विकसित हो जाए कि पडोसी बोलियों को बोलनेवाले उसे समझ न सके, तबतक कोई बोली 'भाषा' नहीं बन पाती। निष्कर्षत: बोली, भाषा की छोटी इकाई है। इसका संबंध ग्राम या मण्डल से होता है। इसमें व्यक्तिगत बोली की प्रधानता रहती है और देशज शब्दों तथा ग्रामीण शब्दावली की प्रधानता होती है। यह मुख्य रूप से बोलचाल की भाषा है। इसमें साहित्यिक रचनाओं का प्राय: अभाव रहता है। व्याकरण की दृष्टि से इनमें असाधुता होती है।

2.3.2.2 **परिनिष्ठित भाषा** (Standard Language) :

भाषा का आदर्श रुप वह है, जो एक विशाल समुदाय के विचार विनिमय का माध्यम बनता है, अर्थात उसका प्रयोग शासन, शिक्षा और साहित्यिक रचना के लिए होता है। भाषा के इस रूप को 'मानक', 'परिनिष्ठित', 'आदर्श', 'परिष्कृत', 'परिमार्जित', 'स्तरीय', 'टकसाली' और 'शुद्ध भाषा' आदि कई नामों से संबोधित किया जाता है। वास्तविक अंग्रेजी शब्द 'Standard' के प्रतिशब्द के रुप में 'मानक' शब्द के स्थिरीकरण के बाद 'Standard Language' के अनुवाद के रूप में 'मानक भाषा' शब्द का प्रयोग होने लगा। जैसे-आज हिंदी, अंग्रेजी, रुसी, फ्रांसीसी इस श्रेणी की भाषाएँ हैं।

भाषाविज्ञान कोश के अनुसार - ''किसी भाषा की उस विभाषा को परिनिष्ठित भाषा कहते हैं, जो अन्य भाषाओं पर अपनी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता स्थापित कर लेती है। और उन विभाषाओं को बोलनेवाले उस भाषा को सर्वाधिक उपयुक्त समझने लगते हैं।'' श्यामसुंदर दास के मतानुसार - ''कई विभाषाओं में व्यवहृत होने वाली एक शिष्ट-परिगृहीत विभाषा ही (राष्ट्रीय भाषा अथवा टकसाली भाषा) कहलाती है।''

कोई भी भाषा पहले बोली के रूप में जन्म लेती है। उसका प्रारंभिक रूप काफी अनगढ़ होता है। उसका प्रयोग लोग अपने घर परिवार में करते हैं। बाद में सभ्यता के विकसित होने पर यह आवश्यक हो जाता है कि भाषा क्षेत्र की कोई एक बोली मानक मान ली जाए और पूरे क्षेत्र से संबंधित कार्यों के लिए उसका ही प्रयोग हो, उस भाषा को 'परिनिष्ठित भाषा' कहा जाता है। जब एक बोली, मानक भाषा बनती है और प्रतिनिधि हो जाती है, तो आसपास की बोलियों पर उसका काफी प्रभाव पडता है। आज की खडी बोली ने ब्रज, अवधी, भोजपुरी को प्रभावित किया है।

परिनिष्ठित भाषा विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त और व्याकरण से नियंत्रित होती है। वह पूरे क्षेत्र के शिक्षित लोगों की शिक्षा, समाचार-पत्र, पत्र-व्यवहार की भाषा होती है। पत्र-पत्रिकाएँ पाठ्य-पुस्तकों में भी इसी भाषा का प्रयोग होता है। इसके अलावा साहित्यिक गोष्ठियाँ, राजनीति, चुनाव-प्रचारों, सामाजिक परिसंवादों में भी मानक-भाषा में विचार विनिमय होता है। सिनेमा, दूरदर्शन, रेडियो आदि में भी इस भाषा का अधिकाधिक प्रयोग होता है। न्यायालय, शासन व्यवस्था, साहित्य में भी इसी भाषा को उपयोग में लाया जाता है।

मानक भाषा का रूप पूरे क्षेत्र में एक ही नहीं होता प्रादेशिक बोलियों का प्रभाव भी उस पर पडता है। यह प्रभाव व्याकरण, शब्द-समूह और उच्चारण पर भी दिखाई देता है। भाजेपुरी लोग 'दिखाई दे रहा है' के स्थान पर 'लौक रहा है' 'हमने काम किया' के स्थान पर 'हम काम किये' का प्रयोग करते हैं। मानक भाषा के प्रादेशिक रूपों के अतिरिक्त लिखित और मौखिक ऐसे दो रूप होते हैं। सभी मौखिक भाषाएँ अपने लिखित रूप से प्राय: भिन्न होती हैं। मौखिक रूप स्वाभाविक होता है, तो लिखित रूप कृत्रिम होता है।

2.3.3 **बोलियों के बनने के कारण :**

बोलियाँ बनने के कारणों में प्रमुखत: भौगोलिक कारण दिखाई देते हैं।

1) किसी भाषा की एक शाखा का अन्य शाखाओं से संबंध विच्छेद होना या अलग होना बोलियों के बनने का प्रमुख कारण है।

2) यदि कोई भाषा बहुत दिनों से एक बडे क्षेत्र में बोली जा रही है और उस क्षेत्र में एक उपक्षेत्र के लोग दूरी के कारण दूसरे उपक्षेत्र के लोगों से नहीं मिल पातें, तो उन दोनों उपक्षेत्रों में अलग-अलग बोलियाँ विकसित हो जाती हैं। जैसे-हिंदी में अवधी, ब्रज इसी प्रकार से विकसित हो गईं हैं।

3) किसी क्षेत्र में भूकंप, जलप्लावन या बडी नैसर्गिक आपत्ति की परिस्थितियाँ निर्माण होती हैं। किसी एक क्षेत्र के बीच व्यवधान आ जाए तथा लोग एक दूसरे के संपर्क में न आ पाए तो बोलियाँ विकसित हो जाती हैं।

4) किसी बडी नदी के दोनों ओर की बस्तियाँ भाषा की दृष्टि से कुछ अंतर रखती हैं, तो वहाँ उन लोगों की नई बोली विकसित हो जाती है।

5) कभी-कभी राजनीतिक या आर्थिक कारणों से लोग अपनी भाषा के क्षेत्र से बहुत दूर जाकर बस जाते हैं, तो वहाँ नई बोली निर्माण होती है।

6) कभी असापास की भाषाओं या दूर की भाषाओं के प्रभाव के कारण एक भाषा में एक क्षेत्रीय रूप विकसित हो जाता है और वह भी बोली का रूप धारण कर लेता है।

2.3.4 **बोली और भाषा में अंतर :**

प्रस्तावना :

बोली और भाषा में वैज्ञानिक स्तर पर स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना बहुत कठिन काम है। वस्तुत: यह केवल अलग-अलग नाम हैं, जो भाषा के वैज्ञानिक विवेचन के लिए आवश्यक माने जाते हैं। बोली और भाषा के बीच अंतर तात्त्विक न होकर व्यवहारिक है। इस बात को अनेक विद्‌वानों ने स्वीकार किया है। जब कोई बोली किन्ही कारणों से प्रमुखता प्राप्त कर लेती है, तो वह 'भाषा' कहलाने लगती है। इसलिए बोली और भाषा का अंतर प्रकार का नहीं, केवल मात्रा का है। फिर भी सामान्यत: बोली और भाषा के बारे में कुछ बातें कही जा सकती हैं, जो निम्नांकित हैं -

1) भाषा का क्षेत्र अपेक्षाकृत बडा होता है और बोली का छोटा। अर्थात भाषा का व्यवहार अधिक दूर तक होता है और बोली का अपेक्षाकृत कम दूरी तक होता है। जैसे - हिंदी भाषा का क्षेत्र दिल्ली, राजस्थान, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार तक फैला हुआ है, किंतु हिंदी की सबसे बडी बोली खडीबोली या कौरवी केवल दस जिलों में सीमित रुप में बोली जाती है।

2) एक भाषा के अंतर्गत एक या एक से अधिक बोलियाँ हो सकती हैं। इसके विपरित भाषा, बोली के अंतर्गत नहीं होती, अर्थात किसी बोली में भाषाएँ नहीं हो सकती।

3) एक भाषा की विभिन्न बोलियाँ बोलने वाले लोग परस्पर एक दूसरे को समझ लेते हैं, परंन्तु विभिन्न भाषाएँ बोलनेवाले लोग एक-दूसरे को नहीं समझ सकते। अर्थात एक भाषा की दो बोलियों में परस्पर बोधगम्यता होती है, जब की दो भाषाओं में यह बोधगम्यता नहीं होती है।

4) बोली किसी भाषा का अंग होती है। भाषा बोली से उत्पन्न नहीं होती । अत: भाषा और बोली में माँ-बेटी का संबंध होता है।

5) भाषा प्राय: साहित्य, शिक्षा तथा शासन के कार्यों में प्रयुक्त होती है, किंतु बोली लोकसाहित्य एवं बोलचाल के लिए प्रयुक्त होती है। साहित्य के क्षेत्र में इसके अपवाद भी मिलते हैं। जैसे - आधुनिक काल के पूर्व हिंदी का अधिकतर साहित्य अवधी, राजस्थानी, ब्रज, मैथिली आदि बोलियों में ही लिखा गया है और आज भी कुछ बोलियों में साहित्य निर्माण हो रहा है।

6) भाषा स्वायत्त होती है, किंतु बोली स्वायत्त नहीं होती। किसी भाषा का परिचय स्वतंत्र रूप से दिया जाता है। किंतु बोली के परिचय में यह कहना आवश्यक होता है कि वह किस भाषा से उत्पन्न है।

7) भाषा का एक मानक या परिनिष्ठित रूप होता है, किंतु बोली का कोई मानक रूप नहीं होता।

8) भाषा व्याकरण सम्मत होती है, जब कि बोली का कोई निश्चित व्याकरण नहीं होता। उसके बहुत से प्रयोग में व्याकरण का अभाव देखा जा सकता है।

9) भाषा के मौखिक और लिखित रूपों में भी एकरूपता एवं समानता होती है। उसमें जो शब्द-रूप उच्चारित किया जाता है, उसकी वर्तनी भी व्याकरणिक नियमों के अनुसार निश्चित होती है, जब कि बोली अधिकतर मौखिक रूप में प्रयुक्त होती है। अत: उसके कुछ मौखिक और लिखित रूपों में एकरुपता भी नहीं होती है।

10) भाषा में स्वायत्तता, मानकीकरण, ऐतिहासिकता और जीवंतता ये चारों विशेषताएँ अनिवार्य रूप से विद्‌यमान रहती हैं। जबकि बोली में ऐतिहासिकता और जीवंतता तो होती है, किंतु मानकता और स्वायत्तता गुण नहीं पाए जाते। हालांकि हिंदी की कुछ बोलियों को मानकीकृत करने के प्रयत्न भी हुए हैं किंतु फिर भी इन्हें भाषा नहीं कह सकतें।

11) भाषा की शब्दावली, वाक्य-रचना, उच्चारण आदि की एकरुपता और समानता बनाएँ रखने के लिए प्रयोक्ता सचेत रहते हैं। जबकि बोली में इस प्रकार की एकरुपता नहीं होती । वह अपने क्षेत्रों के प्रयोक्ताओं द्‌वारा प्रयुक्त होती है।

इस प्रकार बोली और भाषा के बीच गहरा अन्त: संबंध होता है। भाषा वैज्ञानिकों की दृष्टि से भाषा और बोली की भाषिक संरचना में कोई अंतर नहीं होता। जब कोई बोली साहित्य, शिक्षा, शासन आदि के कार्यों में व्यवहृत होने लगती है, तो उसे 'भाषा' कहा जाता है। बोली अनुकूल परिस्थिति पाकर 'भाषा' बन जाती है, और भाषा भी किसी देश की राजधानी के शिक्षित या उच्चवर्ग के लोगों की बोली हुआ करती है। इसलिए भाषा और बोली का अंतर तात्विक न होकर व्यावहारिक माना जाता है। प्रत्येक भाषा

का आरंभिक रूप उसकी बोली में ही निहित होता है। अत: बोली और भाषा में शुद्ध भाषा वैज्ञानिक स्तर पर स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना कठिन है।

2.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न.

अ) निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पर्यायों में से सही पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1) जीवित भाषा का अनिवार्य लक्षण है कि वह हमेशा .... होती है।

क) स्थिर ख) अस्थिर ग) परिवर्तनशील घ) अपरिवर्तनशील

2) भाषा की परिवर्तनशीलता का मतलब है .... ।

क) भाषा विकास ख) भाषा सुधार ग) भाषा की उँचाई घ) स्थिर भाषा

3) परिवर्तन .... का नियम है।

क) मनुष्य ख) बच्चों ग) सृष्टि घ) समाज

4) भाषा कठिनता से .... की ओर जाती है।

क) सूक्ष्मता ख) स्थूलता ग) सरलता घ) ऊँचाई

5) यूरोप में भाषा विकास पर विचार करनेवाले प्रथम व्यक्ति .... है।

क) पाल ख) येस्पर्सन ग) स्टुटवेंट घ) जे.एच. ब्रेडसडार्फ

6) विद्वानों ने भाषा परिवर्तन के कारणों को .... वर्गों में विभाजित किया है।

क) दो ख) तीन ग) चार घ) पाँच

7) प्रयत्न-लाघव का सीधा अर्थ है ....।

क) स्वरागात ख) बलाघात ग) सादृश्य घ) श्रम की अल्पता

8) बल के कारण 'अभ्यंतर' शब्द .... में परिवर्तित हुआ।

क) भीतर ख) अंतर ग) भ्यंतर घ) आभ्यंतर

9) अंग्रेजी शब्द Tragedy का त्रासदी में परिवर्तन .... का उदाहरण है।

क) सादृश्य ख) अधूरा अनुकरण ग) जान-बूझकर परिवर्तन घ) बल

10) संक्षेप का प्रयोग .... दृष्टि से किया जाता है।

क) बलाघात ख) सादृश्य ग) मानावेश घ) प्रयत्न-लाघव

11) .... के कारण हिंदुस्थानी शैली को काफी बल मिला।

क) निराला ख) तुलसी ग) गांधी घ)प्रसाद

12) अंग्रेजी शब्द Academy का अकादमी यह .... का उदाहरण है।

अ) जान-बूझकर परिवर्तन ख) बल ग) सादृश्य घ) भावातिरेक

13) कबीर ने 'पिंगला' के सादृश्य पर इडा को .... कहा है।

क) पीडा ख) इंगला ग) पिघला घ) दु:ख

14) बच्चा का बचवा .... भाषा परिवर्तन का उदाहरण है।

क) मानसिक स्तर ख) भावातिरेक ग) सादृश्य घ) सहज विकास

15) .... भाषा कोमलता और कलाप्रियता के कारण मधुर बन गई है।

क) जर्मन ख) फ्रेंच ग) रुसी घ) जापानी

16) जो कारण भाषा को बाहर से प्रभावित करते हैं उन्हें .... कारण कहा जाता है।

क) अंतर्गत ख) अभ्यंतर ग) बाह्य घ) प्रभावशाली

17) 'मकान' से 'मकानात' यह .... प्रभाव का उदाहरण है।

क) ऐतिहासिक ख) भौगोलिक ग) सांस्कृतिक घ) साहित्यिक

18) 'हायकू' .... देश का काव्य प्रकार है।

क) चीन ख) जापान ग) फ्रान्स घ) भारत

19) .... ने आर्य समाज द्वारा जागृति पैदा की।

क) स्वामी दयानंद सरस्वती ख) स्वामी विवेकानंद
ग) न्या. रानडे घ) महात्मा फूले

20) भाषा का संकीर्णतम् या लघुरूप .... है।

क) स्थानीय बोली ख) व्यक्तिबोली ग) उपबोली घ) बोली

21) भाषा का क्षेत्र बोली की तुलना में अपेक्षाकृत .... होता है।

क) सीमित ख) छोटा ग) मर्यादित घ) व्यापक

22) बोली शब्द अंग्रेजी के .... शब्द का प्रतिशब्द है।

क) Dialect ख) Dielect ग) Diolect घ) Daylect

23) बोली के लिए .... शब्द का भी प्रयोग किया जाता है।

क) भाषा ख) विभाषा ग) उपबोली ग) स्थानीय बाली

24) राठौरी उपबोली .... बोली के अंतर्गत आती है।

क) राजस्थानी ख) मेवाती ग) अवधी घ) बुंदेली

25) परिनिष्ठित भाषा विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त और व्याकरण से .... होती है।

क) परिपूर्ण ख) नियंत्रित ग) समृद्ध घ) श्रेष्ठ

26) बोली और भाषा में अंतर तात्त्विक न होकर .... है।

क) सैद्धांतिक ख) व्यावहारिक ग) सीमित घ) अतात्त्विक

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए -

1) विद्वानों ने भाषा परिवर्तन के कारणों के कौन से दो वर्ग किए हैं?

2) भाषा परिवर्तन के बाह्य कारण किसे कहते हैं?

3) प्रयत्न लघव के लिए पर्यायवाची शब्द कौनसा है?

4) जीवित भाषा का अनिवार्य लक्षण कौनसा है ?

5) कौनसी भाषाओं का अंतिम स्वरूप नहीं होता ?

6) भाषा की परिवर्तनशीलता का मतलब क्या है ?

7) शब्दशास्त्र पर विचार प्रकट करनेवाले भारतीय आचार्यों के नाम बनाइए।

8) अभ्यंतर कारण किसे कहते हैं ?

9) बोली शब्द की व्युत्पत्ति कौनसे धातु से हुई है ?

10) व्यक्तिबोली किसे कहते हैं ?

11) स्थानीय बोली किसे कहते हैं ?

12) परिनिष्ठित भाषा के लिए कौन-कौनसे शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं ?

13) बोली के लिए कौन-कौनसे शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं ?

14) परिनिष्ठित शब्द कौनसे अंग्रेजी शब्द का रुपांतर हैं ?

15) इतिहास के आधार पर भाषा के कौन-कौनसे भेद किए जाते हैं ?

16) हिंदुस्तानी शैली को विकसित करने का श्रेय किसे दिया जाता है ?

17) भावातिरेक के लिए कौनसा शब्द प्रयुक्त किया जाता है ?

18) बोली कब भाषा कहलाने लगती है ?

19) अनुकूल परिस्थिति पाने पर बोली किसमें रूपांतरित होती है ?

20) बोली किससे उत्पन्न होती है ?

2.5 पारिभाषिक शब्द और उनका अर्थ :

प्रयोक्ता - प्रयोग कर्ता (भाषा का मौखिक प्रयोग करनेवाला)

प्रयत्न लाघव - प्रयत्न की लघुता

मानक - प्रमाण, आदर्श

पृथक - अलग

सादृश्य - एक जैसा, समान

व्यवहृत - प्रचलित

अभ्यंतर - भीतर, अंदर या बीच का स्थान

बलाघात - किसी व्यंजन, शब्द या शब्दांश पर बोलते समय अधिक बल देना।

स्वराघात - बोलते समय स्वर पर अधिक बल देना।

हायकू - वेदनामय काव्य प्रकार।

2.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर :

अ)

1) परिवर्तनशील	2) भाषा विकास	3) सृष्टि
4) सरलता	5) जे. एच्. ब्रेड़सडार्फ	6) दो
7) श्रम की अल्पता	8) भीतर	9) जान-बूझकर परिवर्तन
10) प्रयत्न लाघव	11) गांधी	12) जान-बूझकर परिवर्तन
13) इंगला	14) भावातिरेक	15) फ्रेंच
16) बाह्य	17) ऐतिहासिक	18) जापान
19) स्वामी दयानंद सरस्वती	20) व्यक्तिबोली	21) व्यापक
22) Dialect	23) विभाषा	24) बुंदेली
25) नियंत्रित	26) व्यावहारिक	

आ) 1) विद्वानों ने भाषा परिवर्तन के कारणों के आंतरिक (अभ्यंतर) और बाह्य (बाहरी) कारण ऐसे दो वर्ग किए हैं।

2) भाषा को बाहर से प्रभावित कनेवाले कारणों को बाह्य या बाहरी कारण कहते हैं।

3) प्रयत्न लाघव के लिए पर्यायवाची शब्द है - श्रम की अल्पता या मुख-सुख।

4) सतत परिवर्तनशीलता यह जीवित भाषा का अनिवार्य लक्षण है।

5) जीवित भाषाओं का अंतिम स्वरूप नहीं होता है।

6) भाषा की परिवर्तनशीलता का मतलब है - भाषा विकास।

7) शब्दशास्त्र पर विचार प्रकट करनेवाले भारतीय आचार्यों का नाम हैं - कात्यायन, पतंजलि, कैयट, जयादित्य और वामन।

8) परिवर्तन के कुछ कारण स्वयं भाषा में ही विद्यमान रहते हैं। उन्हें अभ्यंतर या भीतरी कारण कहते हैं।

9) 'बोलना' धातु से बोली शब्द की व्युत्पत्ति हुई।

10) एक व्यक्ति की बोली को व्यक्तिबोली कहा जाता है।

11) बहुत-सी व्यक्ति बोलियों के सामूहिक रुप को 'स्थानीय बोली' या 'उपबोली' कहते हैं।

12) परिनिष्ठित भाषा के लिए 'मानक', 'आदर्श', 'परिष्कृत', 'परिमार्जित', 'स्तरीय', 'टकसाली', 'शुद्ध भाषा' आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं।

13) बोली के लिए 'विभाषा', 'उपभाषा' या 'प्रांतीय भाषा' आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं।

14) परिनिष्ठित शब्द अंग्रेजी के स्टैंडर्ड (Standard) शब्द का रुपांतर है।

15) इतिहास के आधार पर भाषा के मूल भाषा, प्राचीन भाषा, मध्ययुगीन भाषा तथा अर्वाचीन या आधुनिक भाषा आदि भेद किए जाते हैं।

16) हिंदुस्थानी शैली को विकसित करने का श्रेय महात्मा गांधी जी को दिया जाता है।

17) भावातिरेक के लिए भावावेश शब्द प्रयुक्त किया जाता है।

18) जब बोली किन्हीं कारणों से प्रमुखता प्राप्त कर लेती है, तब वह 'भाषा' कहलाने लगती है।

19) अनुकूल परिस्थिति पाकर बोली भाषा में रूपांतरित होती है।

20) बोली भाषा से उत्पन्न होती है।

2.7 सारांश :

1) भाषा सामाजिक संपत्ति है। वैसे ही भाषा परिवर्तनशील होती है। भाषा की परिवर्तनशीलता भाषा विकास है। शब्दशास्त्र पर विचार प्रकट करनेवाले कात्यायन, पतंजलि, कैयट, जयादित्य और वामन ये सभी भारतीय आचार्य हैं। यूरोप में इस विषय पर व्यवस्थित रूप से विचार करनेवाले प्रथम व्यक्ति डैनिश विद्वान जे. एच्. ब्रेडसडार्फ हैं। साथ ही पाल, येस्पर्सन आदि विद्वानों ने

भी भाषा परिवर्तन विषय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।

2) भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा परिवर्तन के कारणों को मुख्यत: दो वर्गों में विभाजित किया है। (1) आंतरिक या अभ्यंतर कारण (2) बाह्य या बाहरी कारण।

3) अभ्यंतर कारणों के अंतर्गत प्रयत्न-लाघव, बल, अज्ञान, या अशिक्षा, जान बूझकर परिवर्तन, सहज विकास, सादृश्य, भावातिरेक या भावावेश, मानसिक स्तर, जातीय मनोवृत्ति और अधूरा अनुकरण आदि कारण आते हैं।

4) बाह्य या बाहरी कारणों के अंतर्गत भौगोलिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, वैयक्तिक और वैज्ञानिक प्रभाव आदि कारण आते हैं।

5) भाषा के विविध रुपों के आधार तत्त्व हैं - इतिहास, भूगोल, निर्माता, प्रायोगिकता, मानवता या शुद्‌धता, श्लीलता, प्रचलन, मिश्रण, बोधगम्यता, श्रवण और रचना।

6) बोली शब्द की व्युत्पत्ति 'बोलना' धातु से हुई। बोली का संकीर्णतम् या लघुरूप है- व्यक्तिबोली। एक व्यक्ति की बोली को व्यक्तिबोली कहा जाता है, तो बहुत-सी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप 'उपबोली' या 'स्थानीय बोली' कहलाता है। बहुत-सी मिलती जुलती उपबोलियों का सामूहिक रूप 'बोली' है, तो बोलियों के सामूहिक रूप को 'भाषा' कहा जाता है। भाषा का एक आदर्श रूप जो एक विशाल समुदाय का माध्यम बनता है अर्थात उसका प्रयोग, शासन, शिक्षा, साहित्यिक रचना के लिए होता है, उसे परिनिष्ठित भाषा कहा जाता है।

7) बोलियों के बनने के कारण - प्रमुखता भौगोलिक हैं। जब कोई बोली साहित्य, धर्म, राजनीति, शिक्षा, धर्म, व्यापार, या अन्य प्राकृतिक कारणों से महत्त्व प्राप्त करती है, तो वह 'भाषा' कहलाने लगती है।

8) बोली और भाषा में स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना कठिन है। बोली और भाषा के बीच अंतर तात्त्विक न होकर व्यावहारिक है। बोली अनुकूल परिस्थिति पाकर 'भाषा' बन जाती है। भाषा में स्वायत्तता, मानकीकरण, ऐतिहासिकता और जीवंतता ये चारों विशेषताएँ विद्यमान रहती हैं, किंतु बोली में स्वायतत्ता, मानकीकरण गुण नहीं पाए जाते हैं।

2.8 स्वाध्याय :

अ) दीर्घोत्तरी प्रश्न.

1) भाषा की परिवर्तनशीलता के कारणों को स्पष्ट कीजिए।

2) भाषा की परिवर्तनशीलता के अभ्यंतर कारणों को स्पष्ट कीजिए।

3) भाषा की परिवर्तनशीलता के बाह्य कारणों की चर्चा कीजिए।

4) भाषा के विविध रूपों को स्पष्ट करते हुए, बोली को स्पष्ट कीजिए।

5) भाषा के विविध रूपों पर प्रकाश डालते हुए परिनिष्ठित भाषा को स्पष्ट कीजिए।

6) भाषा और बोली के अंतर को स्पष्ट करते हुए बोलियों के बनने के कारणों पर प्रकाश डालिए।

आ) टिप्पणियाँ ।

1) बोली ।

2) परिनिष्ठित भाषा।

3) भाषा के विविध रूप।

4) बोलियों के बनने के कारण।

5) बेली और भाषा में अंतर।

6) भाषा परिवर्तन के दो अभ्यंतर कारण।

7) भाषा परिवर्तन के दो बाह्य कारण।

2.9 **क्षेत्रीय कार्य :**

1) भाषा परिवर्तन के कारण परिवर्तित सौ शब्दों का संग्रह कीजिए।

2) मराठी और अंग्रेजी भाषा से हिंदी में आए हुए शब्दों को संग्रहित कीजिए।

3) अपनी मातृभाषा की विविध बोलियों का परिचय प्राप्त कीजिए।

2.10 **अतिरिक्त अध्ययन :**

1) भाषाविज्ञान - डॉ. भोलानाथ तिवारी

2) भाषाविज्ञान की भूमिका - आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा

3) भाषाविज्ञान एवं हिंदी भाषा का विकास - डॉ. लक्ष्मीकांत पाण्डेय

4) भाषाविज्ञान : सैद्धांतिक चिंतन - डॉ. रविंद्रनाथ श्रीवास्तव

5) हिंदी भाषा एवं व्याकरण - डॉ. मायाप्रसाद पाण्डेय

6) भाषा और भाषाविज्ञान - डा. तेजपाल चौधरी

7) भाषाविज्ञान एवं हिंदी भाषा - डॉ. हणमंतराव पाटील

8) भाषाविज्ञान के सिद्धांत और हिंदी भाषा - डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना.

●●●

युनिट – 3

1) हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास।
2) हिंदी का शब्द समूह।
3) हिंदी भाषा के विविध रूप (राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा)।
4) विश्वभाषा के रूप में हिंदी।

3.1 उद्‌देश्य।

3.2 प्रस्तावना।

3.3 विषय विवेचन।

3.3.1 हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास।

3.3.2 हिंदी का शब्द समूह।

3.3.3 हिंदी भाषा के विविध रूप (राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा)।

3.3.4 विश्वभाषा के रूप में हिंदी।

3.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न।

3.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ।

3.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर।

3.7 सारांश।

3.8 स्वाध्याय।

3.9 क्षेत्रीय कार्य।

3.10 अतिरिक्त अध्ययन।

3.1 उद्‌देश्य :

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के उपरांत आप –

1. हिंदी भाषा के उद्‌भव और विकास को जान सकेंगे।
2. हिंदी के शब्द समूह से परिचित हो जाएंगे।

3. हिंदी भाषा के - राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा आदि रूपों से परिचित हो जाएँगे।

4. विश्वभाषा के रूप में हिंदी को समझ सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना :

'हिंदी' शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त होता था; व्यापक, सामान्य भाषा परक और विशेष भाषा परक। 19 वी शताब्दी में 'हिंदी' शब्द का प्रयोग विशेष भाषापरक अर्थ में होने लगा। उत्तर प्रदेश में दिल्ली के आसपास बोली जानेवाली जो भाषा थी उसे हिंदी कहा जाने लगा। आज वह हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा के रूप में पहचानी जाती है। आज यही हिंदी विश्वपटल पर छा गई है। विश्व की अन्य भाषाओं के शब्दों को अपनाकर दिन-ब-दिन वह सम्पन्न होती जा रह है। उसका शब्द भंडार बढ़ता जा रहा है। भाषा-विशेष के रूप में हिंदी का अध्ययन करते हुए स्वभावत: कुछ सवाल खडे होते हैं कि हिंदी भाषा का उद्‌भव कब हुआ? इसका विकास कैसे होता रहा? आज उसके कितने रूप हैं? हिंदी का शब्दसमूह कैसा है? वैश्विक स्तर पर उसकी कैसी स्थिति है? आदि सवालों के संदर्भ में हम प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करेंगे।

3.3 विषय विवेचन :

3.3.1 हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास :

वैदिक संस्कृत काल में आर्य भाषा प्रदेश में मुख्य रूप से तीन स्थानीय बोलियों का प्रचलन था। 1) पश्चिमोत्तरी, 2) मध्यवर्ती, 3) पूर्वी। किंतु पाली काल में दक्षिणी नामक बोली का विकास हो गया। अत: कुल स्थानीय बोलियों की संख्या चार हो गई थी। प्राकृत काल में इनकी संख्या सात तक पहुँची-ब्राचड, केकेय, टक्क, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी तथा मागधी। इन्हीं से ही अपभ्रंश काल में छ:सात बोलियों का विकास हुआ। जिन्हें प्राकृतों के नामों से पुकारा जाता है। इन्हीं अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ उद्‌भुत हुई। अपभ्रंश भाषाओं का काल 500 ई. से 1000 ई. तक माना जाता है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में ब्राचड से सिंधी, केकय से लहँदा; टक्क से पंजाबी; महाराष्ट्री से मराठी, शौरसेनी से गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिंदी, पहाडी; अर्धमागधी से पूर्वी हिंदी; मागधी से बिहारी, बंगला, असमी, उडिया आदि भाषाओं का विकास हुआ है।

इस तरह आज जिसे हम हिंदी कहते हैं वह शौरसेनी अपभ्रंश का विकसित रूप है। जो पाँच उपभाषाओं अथवा बोली समूहों (पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी, पहाडी, बिहारी का सामूहिक नाम है। वर्तमान हिंदी पश्चिमी हिंदी की खडी बोली का विकसित रूप है अर्थात परिनिष्ठित रूप है। यह आज सर्वाधिक प्रचलित एवं राष्ट्रभाषा के गौरव को प्राप्त है। किसी भी भाषा के जन्म से ही वह साहित्य में नहीं आ सकती। उसमें प्रौढ़ता आने पर ही वह धीरे-धी साहित्य में प्रवेश करती है। इसी के आधार पर हिंदी भाषा का विकास देखा जा सकता है। उसके विकास अथवा इतिहास के 1000 वर्षों को तीन कालों में विभाजित करके देखा जा सकता है।

1) प्राचीन काल/प्रारंभिक काल/आदि काल - (1000 ई. से 1500 ई. तक)

2) मध्यकाल - (1500 ई. से 1800 ई. तक)

3) आधुनिक काल - (1800 ई. से अब तक)

उपर्युक्त तीन कालों में वैज्ञानिक दृष्टि से हिंदी का अध्ययन करना आवश्यक है। तभी उसके विकास या इतिहास का क्रमबद्ध अध्ययन होगा। जिसके लिए उसका ध्वनि, व्याकरण, शब्दसमूह तथा साहित्य आदि दृष्टि से अध्ययन आवश्यक है।

1) **प्राचीन काल/प्रारंभिक काल/आदिकाल** (1000 ई. से 1500 ई. तक)

इस काल में अपभ्रंश और हिंदी साथ-साथ चल रही थी। इस हिंदी की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं-

ध्वनि : (आदिकालीन हिंदी में प्रयुक्त ध्वनियाँ अपभ्रंश की ही थीं।)

1) आदिकालीन हिंदी में अपभ्रंश के मूल आठ स्वर थे। (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए और ओ किंतु आदिकाल में नए दो स्वर विकसित हुए 'ऐ' और 'औ' जो संयुक्त थे।

2) संस्कृत, प्राकृत, पालि के च, छ, ज, झ अपभ्रंश में स्पर्श व्यंजन थे किंतु अदिकाल में वे स्पर्श संघर्षी हो गए।

3) संस्कृत, प्राकृत पालि के न, ल, स दन्त्य ध्वनियाँ आदिकालीन हिंदी में वर्त्स्य हो गई।

4) अपभ्रंश में ड़, ढ़ व्यंजन नहीं थे। जिनका विकास आदिकालीन हिंदी में हुआ।

5) न्ह, म्ह, ल्ह आदि संयुक्त व्यंजन हिंदी में न, म, ल महाप्राण मूल व्यंजन हो गए।

6) आदिकालीन हिंदी में संस्कृत और फारसी से कुछ नए व्यंजन आ गए जो अपभ्रंश में नहीं थे।

- **व्याकरण :**

आदिकालीन हिंदी का व्याकरण 1100 ई. तक अपभ्रंश के काफी निकट था, अर्थात काफी रूप अपभ्रंश के थे किंतु बाद में धीरे-धीरे अपभ्रंश के रूप कम होकर हिंदी के अपने व्याकरणिक रूप विकसित होने लगे थे। हिंदी का व्याकरण और अपभ्रंश का व्याकरण दोनों में निम्न अंतर था -

i) अपभ्रंश संयोगात्मक भाषा थी तो आदिकालीन हिंदी में वियोगात्मक रूपों का प्राधान्य बढ़ने लगा था।

ii) अपभ्रंश की तरह हिंदी में नपुंसक लिंग नहीं था।

iii) अपभ्रंश की अपेक्षा आदिकालीन हिंदी की वाक्य रचना में शब्द क्रम निश्चित होने लगा था।

- **शब्द समूह :**

आदिकालीन हिंदी में अधिकांश शब्द अपभ्रंश के ही थे। भक्ति आंदोलन की वजह से तत्सम शब्द

हिंदी में बढ़ने लगे थे। इसके साथ ही मुसलमानों के आगमन से पश्तो, फारसी, अरबी और तुर्की के शब्दों की संख्या बढ़कर अपभ्रंश के अनावश्यक शब्दों का प्रयोग न के बराबर हो गया था।

● **साहित्य :**

आदिकालीन हिंदी में गोरखनाथ, विद्यापति, नरपति नाल्ह, चन्दबरदाई, ख्वाजा बंदानेवाज तथा शाह मीराजी आदि साहित्यकार ख्याति प्राप्त कर चुके थे। इस काल के साहित्य में डिंगल, मैथिली, दक्खिनी अवधी तथा ब्रज मिश्रित भाषा का प्रयोग मिलता है।

2) **मध्यकाल** (1500 ई. से 1800 इ. तक)

इस युग के आरंभ में भक्तिधारा का प्राबल्य रहा। इसी कारण आदिकालीन हिंदी की अपेक्षा मध्यकालीन हिंदी काफी परिवर्तित हो चुकी थी, वह परिवर्तन निम्ननुसार है-

● **ध्वनि :**

i) फारसी भाषा में शिक्षा की व्यवस्था और दरबार में फारसी के प्रभाव के कारण उच्चवर्गीय लोगों की हिंदी में क़, ख़, ग़, ज़, फ़ ये नए अल्प व्यंजन आ गए थे।

ii) शब्द के अंत का 'अ' मूल व्यंजन के कारण लुप्त हो गया था। 'राम' का उच्चारण 'राम्' होने लगा। कहीं कहीं अक्षरान्त 'अ' का भी लोप हुआ जैसे अदिकालीन 'जपता' का उच्चारण 'जप्ता' हो गया।

● **व्याकरण :**

ध्वनि की तरह मध्यकालीन हिंदी के व्याकरण में भी परिवर्तन दिखाई देता है।

i) मध्यकालीन हिंदी भाषा में अपभ्रंश के आवश्यक रूप ही बचे थे। आदिकालीन की अपेक्षा मध्यकाल में हिंदी भाषा का व्याकरण अपने पैरों पर खड़ा था।

ii) आदिकालीन संयोगात्मक हिंदी की तुलना में मध्यकालीन हिंदी पूर्ण रूप से वियोगात्मक बन गई थी।

iii) उच्च वर्ग में फारसी भाषा का प्रचार होने के कारण हिंदी वाक्य रचना फारसी वाक्य रचना से प्रभावित होने लगी थी।

● **शब्दसमूह :**

शब्द-समूह की दृष्टि से देखा तो मध्यकालीन हिंदी में विदेशी भाषा के अधिकांश शब्द समाविष्ट हो गए थे। जो इस प्रकार हैं -

i) फारसी से लगभग 3500, अरबी से 2500, पश्तो से 50, तुर्की से 125 तक शब्द मध्यकालीन हिंदी में आए थे, इस तरह कुल आगत शब्दों की संख्या लगभग 6000 से अधिक हो गई थी।

ii) भक्ति आंदोलन की चरम सीमा के कारण तत्सम शब्दों का अनुपात बढ़ गया था।

iii) मध्यकाल में यूरोप से सम्पर्क बढ़ने की वजह से पुर्तगाली, स्पेनीस, फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी भाषा के शब्द इस काल के परवर्ती चरण में हिंदी में आ गए थे।

● **साहित्य :**

मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के फलस्वरूप ब्रज और अवधी भाषा में प्रचुर साहित्य लिखा गया। अर्थात धर्म भावना की प्रधानता के कारण राम स्थान (अयोध्या) की भाषा के साहित्य में अवधी और कृष्ण स्थान (मथुरा) का साहित्य ब्रज में रचा गया था। जो गद्य की अपेक्षा पद्य में अधिक था। दक्खिनी, डिंगल, मैथिली, और खडीबोली में भी साहित्य लिखा गया था। मध्यकालीन साहित्यकारों में जायसी, सूर, मीरा, तुलसी, कबीर, केशव, बिहारी, भूषण, देव, बुरहानुद्दीन, नुसरती, कुली कुतुबशाह, वजही तथा वली आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

● **आधुनिक काल** (1800 ई. से अब तक)

आधुनिक कालीन हिंदी में पूर्ववर्ती दो कालों की तुलना में काफी परिवर्तन दिखाई देता है। जो निम्ननुसार है -

● **ध्वनि :**

i) आधुनिक काल में शिक्षा व्यवस्था के कारण कचहरियों की भाषा उर्दू होने के कारण 'क़, ख़, ग़, ज़,फ़ का प्रसार सुशिक्षित लोगों तक हुआ किंतु आजादी के बाद अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से 'क़, ख़, ग़' के प्रयोग में कमी आयी।

ii) अंग्रेजी के प्रभाव के कारण हिंदी में 'ऑ' ध्वनि प्रयुक्त हुई, उदा. डॉक्टर, वॉटर, कॉटन, कॉमर्स आदि। अन्यत्र 'आ' का ही प्रयोग होता है।

iii) अंग्रेजी के प्रभाव स्वरूप हिंदी में 'ड़' स्वर बढ़ गया।

iv) आदिकालीन हिंदी में 'ऐ' 'औ' का उच्चारण 'अए' 'अओ' था। बल्कि आधुनिक काल में इनकी स्थिति भिन्न हुई।

क) पश्चिमी क्षेत्र में आज मूल स्वर के रूप में उच्चारित होते हैं।

ख) पूर्वी हिंदी क्षेत्र में 'ऐ' 'औ' का उच्चारण संयुक्त स्वर अइ, अउ रूप में होता है।

ग) नैया, वैयाकरण, कौआ जैसे शब्दों में पश्चिमी तथा पूर्वी में 'ऐ', 'औ' का उच्चारण अइ, अउ संयुक्त स्वर के रूप में होता है।

v) आधुनिक काल में कोई शब्द अकारांत नहीं रहा।

vi) आदिकालीन और मध्यकालीन 'व' ध्वनि की दंतोष्ठता कम हो गई थी।

• **व्याकरण :**

i) हिंदी की विभिन्न बोलियों के व्याकरण की स्थिति अलग-अलग सी हो गई थी। सूर, बिहारी, देव की ब्रजभाषा और जायसी, तुलसी की अवधी आदि इस बात का प्रमाण है। इन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त हुई तो पृथक भाषा की संज्ञा प्राप्त होने की संभावना पैदा हुई।

ii) इस काल में हिंदी पूर्णत: वियोगात्मक बन गई थी।

iii) प्रेस, रेडियो एवं शिक्षा के प्रचार-प्रसार से और महावीर प्रसाद द्विवेदी के सहयोग से हिंदी का व्याकरण स्थिर हुआ है।

iv) आधुनिक काल के प्रचार-प्रसार के माध्यम तथा अंग्रेजी के प्रभाव से हिंदी भाषा वाक्य रचना मुहावरा, तथा लोकोक्ति के क्षेत्र में प्रभावित हुई थी। विरामचिह्नों के माध्यम से भी वह अंग्रेजी से प्रभावित हुई।

v) आधुनिक काल में हिंदी भाषा रूप-रचना तथा वाक्य रचना क्षेत्र में परिवर्तित हो रही है। उदा. 'कीजिए' के लिए 'करिए', 'मुझे' के लिए 'मेरे को', 'मुझको' के लिए 'मेरे' से 'नहीं जाता है' के स्थान पर 'नहीं जाता', 'न जा रहा', 'नहीं जा रहा है' आदि नए रूप आ रहे हैं।

• **शब्द समूह :**

शब्द भंडार की दृष्टि से देखा जाए तो 1850 ई. तक मध्यकाल का ही शब्द भंडार था, किंतु उसके पश्चात् अंग्रेजी के शब्द आने लगे थे। साथ ही आर्य समाज के प्रचार-प्रसार से तत्सम शब्दों की संख्या बढ़कर तद्भव शब्द हिंदी से निकल गए थे। 1900 ई. के बाद प्रसाद, पंत, महादेवी वर्मा आदि साहित्यकारों के साहित्य में तत्सम शब्दों की अधिकता दिखाई देने लगी थी। द्विवेदी और छायावादी काल के बाद प्रगतिवाद में तद्भव शब्दों में वृद्धि हुई और तत्सम शब्दों का प्रयोग कम मात्रा में होने लगा था। 1947 ई. के बाद पुराने शब्दों का प्रयोग नए अर्थ में होने लगा था। जैसे 'सदन' शब्द का प्रयोग राजसभा तथा लोकसभा के लिए होने लगा। नाटक, उपन्यास कहानी तथा कविता में बोलचाल की भाषा प्रयुक्त होने लगी उसमें अरबी, फारसी, तथा अंग्रेजी के जनप्रचलित शब्दों का प्रयोग होने लगा। आलोचना की भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ गया। हिंदी में पारिभाषिक शब्दों की संख्या बढ़ने लगी है। आज वह लगभग डेढ़ लाख तक पहुँच गई है। अर्थात हिंदी नए शब्दों से समृद्ध होते हुए दिन-ब-दिन समृद्ध होती जा रही है।

• **साहित्य :**

आधुनिक काल में भारतेन्दुकाल से मुख्य रूप से हिंदी साहित्य का विकास होता गया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साथ भारतेन्दु मंडली के रचनाकार, द्विवेदी, छायावादी, छायावादोत्तर, प्रगतिवाद और प्रयोगवादी काल के रचनाकारों द्वारा गद्य-पद्य में प्रचुर मात्रा में साहित्य रचा गया। वर्तमान में भी काफी मात्रा में लेखन हो रहा है। मैथिलीशरण गुप्त, दिनकर, प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, पंत, निराला, सुदर्शन, जैनेंद्र,

यशपाल, अज्ञेय, बच्चन, महादेवी वर्मा तथा नागार्जुन जैसे रचनाकारों की रचनाओं से हिंदी भाषा शिखर तक पहुँचने लगी है। उत्तरोत्तर साहित्य में हिंदी का प्रयोग बढ़ने लगा है।

संक्षेप में शौरसेनी, अर्धमागधी और मागधी अपभ्रंश से निकाली हिंदी का आज दिन-ब-दिन विकास होता जा रहा है। वर्तमानकाल में साहित्य के माध्यम से व्यवहृत खडीबोली हिंदी सार्वदेशिक होती जा रही है। यह सभी भाषाओं से शब्दों को ग्रहण करते करते अपने कोमल स्वभाव से ऊँचाई की ओर बढ़ने लगी है।

3.3.2 हिंदी का शब्दसमूह :

सार्थक ध्वनिसमूह को प्राय: शब्द की संज्ञा दी जाती है। किसी भी भाषा में अनेक प्रकार के शब्द होते हैं। प्रत्येक भाषा का अपना शब्द-समूह होता है। भोलानाथ तिवारी ने 'हिंदी भाषा का संक्षिप्त इतिहास' पुस्तक में लिखा है - ''किसी भाषा में जिन शब्दों का प्रयोग होता है, उनके समूह को उस भाषा का शब्द-भंडार या शब्द-समूह कहते हैं।''

आज हिंदी शब्द समूह पर जब हम विचार करते हैं तब स्पष्ट होता है कि हिंदी ने बहुतांश शब्द तो प्राचीन एवं मध्यकालीन आर्यभाषाओं से लिए हैं, उनमें कई आगत विदेशी शब्द हैं, उसमें देशज शब्द भी हैं, तथा हिंदी में आज अनेक ऐसे शब्द हैं, जो विज्ञान, विधि, वाणिज्य, भूगोल, तकनीकी प्रविधि आदि में प्रचलित हैं। इन सभी प्रकार के शब्दों का वर्गीकरण निम्ननुसार किया जा सकता है।

1) **तत्सम शब्द :**

'तत्सम' में 'तत्' का अर्थ 'वह' अर्थात 'संस्कृत' और सम का अर्थ है 'समान'। इन्हें भारतीय आर्य भाषाओं के अंतर्गत रखा जा सकता है। जिसमें प्राकृत पाली, अपभ्रंश से आए शब्द, संस्कृत से सीधे हिंदी में आए शब्द, संस्कृत के व्याकरणिक नियमों के आधार पर हिंदी काल में निर्मित तत्सम शब्द और अन्य भाषाओं से आए तत्सम शब्द आदि।

तत्सम शब्द वे होते हैं, जो किसी प्राचीन या भूतपूर्व भाषा से ज्यों के त्यों ग्रहण कर लिए जाते हैं याने किसी भी भाषा के मूल स्रोत के शब्दों को ही तत्सम शब्द कहते हैं। साहित्यक हिंदी में संस्कृत के मूल शब्दों का प्रयोग बहुतायत से होता है। हिंदी में प्रयुक्त तत्सम शब्द संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय के रूप में मिलते हैं। हिंदी में तत्सम शब्द चार प्रकार के हैं -

i) प्राकृतों (पालि, प्राकृत, अपभ्रंश) से होते हुए आए शब्द जैसे अचल, अध, अचला, काल, कुसूम, जन्तु, दण्ड, दम आदि, ऐसे शब्दों की संख्या अधिक हैं।

ii) दूसरे वे हैं; जो संस्कृत से सीधे हिंदी में आए हैं - जैसे फल, पुस्तक, पुष्प, मुन, हरि, शिव, कर्म, विद्या, ज्ञान, क्षेत्र, कृष्ण, मार्ग, मत्स्य, मद्य, मृग, कुशल आदि। ये भक्ति, रीति तथा आधुनिक कालों में लिए गए हैं। ऐसे शब्दों की संख्या प्रथम वर्ग की तुलना में अधिक है।

iii) संस्कृत के व्याकरणिक नियमों के आधार पर हिंदी काल में निर्मित तत्सम शब्द-जलवायु, वायुयान, रेखाचित्र, निर्देशक, अभियंता, प्राध्यापक, संस्तुति, प्रतिवेदन, प्रभाग, संपादकीय नगरपालिका, समाचार-पत्र, पत्राचार आदि। इस प्रकार के अधिकांश शब्द आधुनिक काल में शब्दों की कमी की पूर्ति के लिए बनाए जा रहे हैं।

iv) अन्य भाषाओं से आए तत्सम शब्द - जैसे मराठी से प्रगति, वाङ्मय, बाडा, गोठ, पड़ाव, श्रीखंड; गुजराती से हडताल, दा (दादा), पटेल, बापू; पंजाबी से खालसा, भाँगडा, कुडी, इत्थे, चंगा; बंगाली से उपन्यास, गल्फ, कविराज, तत्त्वावधान, आपत्ति, संभ्रात, सन्देश आदि।

2) तद्भव शब्द :

''तद्भव'' में तत् का अर्थ 'वह' अर्थात संस्कृत और 'भव' का अर्थ है 'उत्पन्न'। अर्थात, तद्भव वे शब्द हैं जो संस्कृत शब्दों से उत्पन्न हुए और प्राकृत से होते हुए हिंदी में आए हैं। दूसरे शब्दों में ये संस्कृत या तत्सम शब्दों (ध्वनि की दृष्टि से) विकसित; परिवर्तित अथवा विकृत रूप हैं। इनके मूलरूप में परिवर्तन हो जाता है। किंतु अर्थ वही रहता है। उदा. कान्ह (तत्सम-कृष्ण), घर (तत्सम-गृह), काम (तत्सम-कर्म), हाथ (तत्सम-हस्त), घडा (तत्सम-घट), घोडा (तत्सम-घोटक) हिंदी शब्दावली में इन तद्भव शब्दों की संख्या सर्वाधिक है। बोली में तद्भव शब्द अधिक मात्रा में प्रयोग में लाए जाते हैं। संक्षेप में मूल तत्सम शब्दों का विकृत, परिवर्तित या विकसित रूप ही तद्भव शब्द है। जैसे -

तत्सम (संस्कृत)		तद्भव	तत्सम (संस्कृत)		तद्भव
कृष्ण	-	कान्ह	पुछ	-	पूँछ
अग्नि	-	आग	कार्य	-	काज
अर्ध	-	आधा	दधि	-	दही
गृह	-	घर	पुस्तिका	-	पोथी
सर्प	-	साँप	कटक	-	कीडा
मुख	-	मुँह	वधू	-	बहू
भ्रमर	-	भौरा	विशति	-	बीस
उष्ट्र	-	ऊंट	सप्त	-	सात
जिव्हा	-	जीभ	गर्दभ	-	गधा

3) देशज शब्द / देशी शब्द :

देशज का अर्थ है (देश+ज) जो देश में ही जन्में हों। अर्थात जो शब्द न संस्कृत के हैं न संस्कृत से

बने हैं, न विदेश की किसी भाषा से आए हैं; ऐसे शब्द देशज या देशी कहलाते हैं। इन शब्दों का मूलरूप और व्युत्पत्ति का पता नहीं चलता। पर जो लोक जीवन में व्यवहृत हैं। इनके दो वर्ग हैं -

अ) अज्ञात व्युत्पत्तिक (ब) अनुकरणात्मक

अ) अज्ञात व्युत्पत्तिक शब्द :

जिनकी व्युत्पत्ति का पता न हो जैसे -टट्टू, तेंदुआ, कबड्डी, गडबड, घपला, चूहा, झंझट, झगडा, टीस, थोथा, धब्बा, पेड, आटा, भूसा, कद्दू, चोंगा, ठेस, बैंगन, भुर्ता, टीला आदि।

ब) अनुकरणात्मक शब्द :

जो शब्द ध्वनि के अनुकरण के आधार पर बने हुए हैं अत: ये ध्वन्यात्मक होते हैं। इस प्रकार के शब्द तत्सम, तद्भव या विदेशी नहीं होते; जैसे, खड़खड़, भड़भड़, खटखट, धमधम, हड़हड़, घड़घड़, चटचट, टर्राना, फटफटिया, खचाखच, छनछनाहट, चिड़चिड़ आदि।

4) **अर्धतत्सम शब्द :**

अर्धतत्सम शब्द उन शब्दों को कहा जाता है, जो पूरी तरह तत्सम नहीं होते। केवल हिंदी काल में संस्कृत से मूलत: तत्सम रूप में लिए गए हैं और जिनमें हिंदी में ही कुछ परिवर्तन हो गए हैं। उन्हें स्पष्ट करने के लिए नीचे तत्सम तद्भव और अर्धतत्सम शब्द दिए हैं।

तत्सम	**तद्भव**	**अर्धतत्सम**
चन्द्र	चाँद	चन्दर
कर्म	काम	करम
कृष्ण	कान्ह	किशन-किश्नु
कार्य	काज	कारज
अक्षर	आखर	अच्छर

अर्धतत्सम, तद्भव और तत्सम शब्द का अर्थ वही होता है जो मूलत: तत्सम में होता है। फर्क इतना ही है कि तद्भव की भाँति इनके रूप में विकार आता है।

5) **विदेशी शब्द :**

'विदेशी शब्द' का मूल अर्थ है ''अन्य देश की भाषा से आए हुए शब्द।'' भारतीय व्यापारी जब व्यापार के बहाने विदेश चले गए तब उनके साथ विदेशी भाषाओं के बहुत से शब्द हिंदी में आ गए। साथ ही भारत पर लगभग एक हजार वर्षों तक विभिन्न विदेशी सत्ताओं का शासन रहा-अरबी, तुर्की, इरानी, पठान, डच, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, मुगल तथा अंग्रेज आदि लोगों की भाषाओं से बहुत से शब्द हिंदी में आए

और हिंदी के बनकर रह गए। ऐसे शब्दों को आगत या गृहित शब्द कहा जाता है। जो निम्ननुसार हैं -

अरबी से आए शब्द - अल्लाह, असर, अदालत, आईना, आखिर, ईमान, आफत, आशिक, इमारत, इबादत, कल, हकीम, मरीज, इन्साफ, एहसास, नुस्खा, फैसला आदि।

फारसी से आए शब्द - अंजाम, आबाद, आबरू, आवारा, कश्ती, किनारा, दवा, दीवार, मकान, कस्बा, बरफी, सेब, खरबूजा, खजांची, बरामदा, सरकार, वकील, चपरासी, जिला, जिन्दगी, चालाकी, गन्दगी, बदनामी, खुशी आदि।

अरबी और फारसी के लगभग छ:हजार शब्द हिंदी में आए हैं। इन्हें ठीक तरह से पहचानकर अलग करना मुश्किल है।

पुर्तगाली - पुर्तगाली से लगभग डेढ़ सौ के आसपास शब्द हिंदी में आए हैं; उदा. कप्तान, अलमारी, आलपिन, इस्त्री, इस्पात, कर्नल, काफी, तम्बाकू, गमला, गोदाम, चाबी, चाय, तौलिया, नीलाम, पिस्तौल, फीता, बाल्टी, बिस्कुट, संतरा, पगार आदि।

अंग्रेजी - अंग्रेजी से लगभग साडेतीन हजार शब्द हिंदी में आ गए हैं, किंतु वर्तमान में इनकी संख्या अगणित हो गई है, जैसे - शर्ट, पेन्ट, टाई, स्वेटर, कोट, सूट, बूट, सैण्डल, स्लीप, अण्डरवेअर, ब्लाऊज, फ्रॉक, पेटीकोट, केक, चॉकलेट, आइसक्रीम, ब्रेड, ट्रॉफी, हॉल, रुम, कीचन, गॅलरी, बाल्कनी, बाथरूम, प्लंबर, कंडक्टर, क्लर्क, मशीन, रेडियो, टेलीफोन, कैमरा, फिल्म, स्कूल, सिनेमा, शो, क्रेन, क्लास, बोर्ड, प्रोफेसर, प्रिंसिपल, ग्लास, डस्टर, नोटिस, डॉक्टर, नर्स, ऑपरेशन, वार्ड, इंजेक्शन, सर्जन, पेन, पेन्सिल, मनिऑर्डर, स्टेशनरी, सिग्नल, टिकट, स्टेशन, स्टॅन्ड, गार्ड, एक्सप्रेस, व्हिस्की, ब्रांडी, ब्रश, वॉटर, सेंट, लिपस्टिक, क्वार्टर, फोटो, कोर्ट, जज, अपील, पुलिस, जेल, जेलर, सिगरेट, माचिस, सोडा आदि।

तुर्की : तुर्की से डेढ़ सौ तक शब्द हिंदी में आए हैं, जैसे - बाबू, कुली, कैंची, खच्चर, खाँ, गलीचा, गनीमत, चम्मच, चाकू, चेचक, तोप, दारोगा, बाबा, बारूद, बीबी, बोगस, मुग़ल, लाश, सराय, सुरंग, आका, उर्दू, बहादुर, सौगात, तुर्क, मुचलका आदि।

पश्तो : मुण्डा, पठाण, आखरोट, पटाखा, डेरा, नगाडा, कलूटा, अचार, डंगर, हमजोली, खर्राटा आदि।

फ्रांसीसी - एडवोकेट, कूपन, कप, कालर, मार्शल, मेम, मेयर, वारंट, पिकनिक, टेबूल आदि।

इनके अलावा अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द हिंदी में बहुत कम हैं कुछ उदाहरण यों हैं -

डच - तुरुप (ताश में), बम (गाडी का), स्क्रूप आदि।

जर्मनी - डैक, बैंगन, ट्रेन, सेमिनार, डॉक, आदि।

चीनी - सिंदूर, चीनांशुक, मुसार, लीजी, चीनी आदि।

मिस्त्री – मुद्रा, मुद्रिका, मिश्री आदि।

इरानी – मिहिर, तीर, मग, गंज, सिक्का आदि।

जापनी – रिक्शा, सायोनारा, हाइके, कराटे आदि।

स्पेनी – सिगार, पिउन, सिगरेट आदि।

लैटिन – दीनार, रोमन आदि।

रूसी – रुबल, टैगा, मैट्रो, बोदका, स्पुतनिक आदि।

इटैलियन – लाटरी, कन्सर्ट, वायलिंग, आथेरा, कार्टून आदि।

6) **संकर शब्द :**

भिन्न-भिन्न भाषाओं के शब्दों को जोडकर बनाए गए शब्द संकर कहलाते हैं। अर्थात जो दो भाषाओं के योग से बने हैं। इन यौगिक शब्दों का निर्माण प्रत्यय उपसर्ग से भी होता है। उदा.

रेलगाडी - 'रेल' अंग्रेजी का शब्द है, 'गाडी' हिंदी शब्द है।

मालगाडी - माल - (अरबी) + गाडी -)हिंदी)

नाकाबंदी नाका - (अरबी) + बंदी - (फारसी)

जेबघडी जेब - (फारसी) + घडी - (हिंदी)

रेलयात्रा रेल - (अंग्रेजी) + यात्रा - (हिंदी)

विज्ञापन बाजी विज्ञापन - (हिंदी) + बाजी - (फारसी)

दादागीरी दादा - (हिंदी) + गीरी - (अरबी)

पावरोटी पाव - (पोर्तुगाली) + रोटी - (हिंदी)

अंग्रेजियत अंग्रेज - (फ्रांसीसी) + इयत - (अरबी प्रत्यय है।)

प्रोफेसरी प्रोफेसर - (अंग्रेजी) + ई - (हिंदी प्रत्यय है।)

इन शब्दों के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं के शब्द हिंदी में मिलते हैं - द्रविड परिवार की जो भाषाएँ हैं उनमें कन्नड, तमिल, तेलगु, मलयालम आदि से आए शब्द पिल्ला, इडली, डोसा, सांबर, उखल, कज्जल, कुटि, कोण, ताला, नीर आदि।

संक्षेप में हिंदी शब्द समूह में आर्य द्रविड और विदेशी शब्दों का समावेश है। आज अपने विशाल शब्दसमूह और आनेवाले नए-नए शब्दों का स्वीकार करके यह विश्व की समृद्ध भाषा बनती जा रही है।

3.3.3 हिंदी भाषा के विविध रूप (राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा) :

भारत वर्ष में अन्य भाषा क्षेत्रों की तुलना में हिंदी भाषा का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। हिंदी सदियों से कई रूपों में व्यवहृत होती रही है। हिंदी प्रदेशों में विविध बोलियों के रूप में तो है ही, साथ ही अपने क्षेत्र तथा अन्य भाषा क्षेत्र में सम्पर्क भाषा के रूप में भी वह व्यवहृत है इसी वजह से स्वाधीनता के बाद राजभाषा तथा राष्ट्रभाषा के रूप में भी वह प्रचलित है। आज तो विश्व में इसका महत्त्व बढ़ता जा रहा है।

• राष्ट्रभाषा :

जब कोई बोली आदर्श भाषा के पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद उन्नत होकर और भी महत्त्वपूर्ण बन जाती है तथा पूरे राष्ट्र या देश में अन्य भाषा क्षेत्र में भी उसका सार्वजनिक कार्यों आदि में प्रयोग होने लगता है, तब वह राष्ट्रभाषा का पद पा जाती है।

राष्ट्रभाषा के बारे में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी कहते हैं, ''उसी भाषा का गौरव सब से अधिक हो सकता है, और वही राष्ट्रभाषा कहला सकती है, जिसको सब जनता समझती हो और जिनका अस्तित्व सार्वजनिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हो।''

राष्ट्रभाषा संपूर्ण राष्ट्र की भावात्मक एकता को अभिव्यक्त करने का माध्यम होती है, इसके द्‌वारा पूरे राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना प्रतिभासित होती है, यह सर्वाधिक बोली और समझी जानेवाली भाषा होती है। इसी कारण हर विकसित स्वतंत्र और स्वाभिमानी देश अपने लिए एक राष्ट्रभाषा निर्धारित करता है। भारत में मध्य देश की भाषाएँ राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन हो चुकी हैं। जैसे संस्कृत, प्राकृत, पाली, फारसी और आज की हिंदी।

भारत में हिंदी का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। जनगणना के अनुसार भारत में 20.85 करोड लोगों की मातृभाषा हिंदी है। भारत में मुस्लिम साम्राज्य के बाद हिंदी का विकास तेज गति से होता गया। वास्तव में आजादी के पूर्व हिंदी को भी राज्याश्रय प्राप्त नहीं हुआ था। हिंदू-मुसलमान, आर्य, अनार्य, उत्तर-दक्षिण, शैव-वैष्णव आदर्श को लोगों ने अपने सिद्‌धांतो और मान्यताओं के आधार पर हिंदी में व्याख्यायित किया। सभी सन्त, मनीषी, चिन्तक एवं महानुभावों ने अपने आदर्शों को हिन्दी में प्रकट किया। सूफी संत, जायसी, कुतूबन, मंजन, दाऊद आदि ने सूफी दर्शन और इस्लाम के स्वरूप को इसी भाषा में प्रस्तुत किया। मध्यकालीन सन्तो ने निर्गुण-सगुण वादियों ने हिंदी भाषा को अपनाया। अंग्रेजी के राज्य में भले ही अंग्रेजी राजकाज की भाषा रही होगी, मगर जनता का भाषा के रूप में हिंदी अपनी स्वाभाविक गति से राष्ट्रभाषा अर्थात समग्र देश की भाषा बनती गई।

भारत बहुभाषा-भाषी देश है। भारत में बंगाली, तेलगु, मराठी, तमिल, ऊर्दू, गुजराती, मलयालम, कन्नड, उडिया, पंजाबी, कश्मिरी, सिंधी, संस्कृत तथा हिंदी भाषाएँ प्रयुक्त हैं। मगर इन सब में हिंदी बोलने, समझने और लिखने वालों की तादाद बडी है। महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा के जो लक्षण बताए थे - i) वह सरल, सहज होनी चाहिए, ii) उसके द्‌वारा आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो जाने

चाहिए। iii) बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हो। ये सारे लक्षण हिंदी में दिखाई देते हैं। वास्तव में विवेचित सारी भाषाएँ राष्ट्रभाषाएँ हैं मगर उन सब में हिंदी राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित है। उसके पास लंबा इतिहास, समृद्ध साहित्य, सबको पचा सकने की क्षमता, कोमलता, विशाल क्षेत्र, व्याकरण है, साथ ही जाँत-पाँत, धर्म, क्षेत्रियता अथवा प्रान्तीयता के समस्त बंधनों को उसने तोड़ दिया है। अर्थात खुद वह राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी बन गई है। आज पूरे विश्व को विदित है कि भारत की राष्ट्रवाणी हिंदी है। अर्थात वह अपने समस्त सुलक्षणों से परिपूर्ण है और वह सभी जिम्मेदारियों का वहन कर रही है। हिंदी राष्ट्रीय एकात्मता की पहचान बन गई है।

● राजभाषा :

राष्ट्रभाषा, राष्ट्र के लोगों की संपर्क भाषा के रूप में तथा प्रांतीय भाषाओं के बीच सेतु का कार्य करती है, तो राजभाषा राज-काज अर्थात केंद्रीय सत्ता की भाषा होती है। राजभाषा का सीधा अर्थ है - राजा अथवा शासक की भाषा, जिसका उपयोग राजकाज के लिए किया जाता है। केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों के द्वारा पत्र-व्यवहर, राजकार्य, और सरकारी लिखा-पढ़ी के कामों में इसी भाषा का व्यवहार किया जाता है। संविधान के प्रावधान के अनुसार राजभाषा का प्रयोग मुख्यत: चार क्षेत्रों में आवश्यक है। i) शासन, ii) विधान, iii) न्यायपालिका, iv) कार्यपालिका। अर्थात राजभाषा अन्तर्प्रादेशिक मध्यवर्तिनी भाषा होती है।

भारत में सम्राट अशोक के काल में पाली राजभाषा थी। मुस्लिम शासन काल में अकबर ने सरकारी दस्तावेज फारसी में किए। बाद में ईस्ट इंडिया कंपनी ने उच्च स्तर पर अंग्रेजी को राजभाषा बनाई। आजादी के बाद राष्ट्रीय चेतना का विकास होने पर हिंदी को 14 सितम्बर, 1949 ई. से संविधान में राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया है। भारतीय संविधान के 343(1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी है और लिपि देवनागरी है। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होनेवाले अंकों का रूप भारतीय अंको का अन्तरर्राष्ट्रीय रूप स्वीकार किया गया है।

हिंदी 'संघभाषा' (Official language), 'कार्यालयी भाषा' (Official Language) तथा राजभाषा के रूप में स्वीकृत है। हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रयास 15 अगस्त, 1947 के पूर्व से ही शुरू था। संविधान सभा की नियत समिती 1946 इ. से डॉ. राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में कार्यरत थी। उन्होंने निर्णय लिया था कि संविधान सभा की कार्यवाही हिंदी (हिंदुस्तानी) या अंग्रेजी में होगी। अंत में मूल अधिकार समिती ने सर्वसम्मति से राजभाषा के रूप में हिंदी को और लिपि के रुप में देवनागरी को और आंकों के लिए भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूपों को तथा 15 वर्षो तक अतिरिक्त राजभाषा के रूप में अंग्रेजी को स्वीकृत किया। यहाँ इस बात का उल्लेख करना जरूरी है कि 15 वर्षों के बाद भी संघ की राजभाषा समिती अंग्रेजी भाषा को राजभाषा पद से हटाने के पक्ष में नहीं थी। हिंदी को बढ़ावा, देने, उसका प्रचार प्रसार करने तथा उसकी प्रगति के लिए सरकार द्वारा उसके मानकीकरण के प्रयास किए गए है। मगर राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद ३४३(२) के द्वारा प्राप्त अधिकार के अनुसार अंग्रेजी के साथ हिंदी को प्राधिकृत किया। राजभाषा अधिनियम 1963 तथा राजभाषा नियम 1976 के अनुसार सूचित किया कि 'केंद्रीय सरकार के

स्वामित्व के या नियंत्रण के किसी निगम, कंपनी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम, कंपनी या कार्यालय के बीच प्रयोग में लाई जाती है, वहाँ उस तारीख तक, जब पूर्वोक्त संबन्धित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय, निगम या कंपनी का कर्मचारी वृन्द हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद यथास्थिति अंग्रेजी भाषा या हिंदी में भी दिया जाएगा। मतलब स्पष्ट है, आज भी हिंदी के साथ अंग्रेजी भाषा सहभाषा के रूप में राजभाषा पद पर आसीन है।

भारत की शासन व्यवस्था केंद्रीय और प्रांतीय है। केंद्रीय शासन की राजभाषा हिंदी है। हिंदीतर प्रांतो में उनकी अपनी अपनी राज्य भाषाएँ राजभाषाओं के रूप में कार्यरत हैं, इस अवस्था में इन राज्यों को केंद्र के साथ संपर्क करने हिंदी का प्रयोग करना पड़ता है। किंतु हिंदी प्रदेशों में हिंदी ही राजभाषा और राज्यभाषा दोनों पदों पर प्रतिष्ठित हैं। इस तरह हिंदी केंद्र सरकार की राजभाषा है केंद्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंको में राजभाषा के रूप में उसका प्रयोग बढ़ रहा है, भारत सरकार के सभी कानून, संकल्प, निविदा, प्रेसनोट, विज्ञापन, निर्णय, अंग्रेजी के साथ होते हुए भी राजभाषा हिंदी में प्रकाशित होते हैं।

● संपर्क भाषा :

संपर्क भाषा का आशय है, जनभाषा। जिस भाषा के माध्यम से किसी भूप्रदेश में रहनेवाले लोग सहजता से एक दूसरे से संपर्क स्थापित करते हैं, उसे जनभाषा या संपर्क भाषा कहते हैं। जो किसी क्षेत्र, राष्ट्र, अथवा वर्ग में परस्पर वैचारिक आदान-प्रदान के माध्यम के रूप में कार्यरत रहती हो। संपर्क भाषा शासन तथा राज्याश्रय से उपेक्षित रहने पर भी जनमानस में बराबर अपनी जडे मजबूत करती रहती है। उसकी पहचान राष्ट्र के सभी लोगों में होती है। राष्ट्र या देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जाने पर जनता केवल उसी जनभाषा में संपर्क स्थापित करती है।

भारतीय संविधान द्वारा कुल 22 भाषाएँ स्वीकृत हैं। 1961 की जनगणना के अनुसार बारह सौ भाषाएँ बोली जाती हैं ऐसी अवस्था में यहाँ के लोगों को परस्पर व्यवहार के लिए संपर्क भाषा की जरूरत होती है।

भारत जैसे विशाल देश में प्राचीन काल में मध्य देश की भाषा संपर्क भाषा के रूप में शीर्षस्थ रही है। मध्य देश में हिंदी बड़े पैमाने पर बोली जाती है भले ही उसकी बोलियाँ अलग-अलग हो सकती है मगर उनमें परस्पर बोधगम्यता है। प्राचीन काल में शंकराचार्य ने अपनी मलयालम भाषा छोड़कर संस्कृत को अपनाया था। बौद्ध काल में भगवान बुद्ध ने उपदेश के लिए जनभाषा को संपर्क भाषा के रूप में अपनाया। जो मध्य देश की पालि भाषा थी। अत: संस्कृत, पालि, शौरसेनी, प्राकृत, नागर, अपभ्रंश और कालांतर में पश्चिमी हिंदी राष्ट्र की संपर्क भाषा के रूप में विकसित हुई। स्वयं महात्मा गांधीजी ने अपनी मातृभाषा गुजराती को छोड़कर हिंदी को पूरे देश की राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा बनाने को प्रोत्साहित किया।

यदि सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाए तो स्पष्ट है, प्राचीन काल, मध्यकाल और ब्रिटिश काल में जनभाषा ही संपर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित रही है। 'उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक समस्त भारत

में केवल हिंदी ही ऐसी भाषा रही है जिसे बोलने या समझनेवाले आसानी से मिलते हैं। इसीलिए हिन्दी को ही संपर्क भाषा की मान्यता प्राप्त होती है। इसकी सातवीं शती से सिद्धों, नाथों, संतों, भक्तों आदि ने हिंदी को अपनाया था, अर्थात हिंदी संपर्क की भाषा थी। स्वाधीन भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था ''एक राज्य से दूसरे राज्य को पत्रव्यवहार अथवा बोलचाल के लिए एक ही भाषा अपेक्षित है, वह है हिंदी भाषा। हिंदी भाषा ही उपयुक्त और उचित संपर्क भाषा बन सकती है।''

आज राजभाषा, राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी के सामने कई व्यवधान हैं मगर जनभाषा, संपर्क भाषा के रूप में वह खुले साँस की अधिकारिनी है। संपर्क भाषा के रूप में उसे कोई बाधा नहीं है। हिंदी का समृद्ध साहित्य, कोमलता, हिंदी फिल्में आदि ने इसके संपर्क के रूप को अक्षुण्ण बना रखा है। आज पूरे भारत में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी ही कार्यरत है।

संक्षेप में, मध्य देश की भाषा हिंदी अपने हजारों वर्षो की अनवरत यात्रा से आगे बढ़ते-बढ़ते विकास के चरम उत्कर्ष तक पहुँच गई है। इसी बीच कई व्यवधानों को पार कर, उपेक्षित रहकर भी उसने भारत भूमि में अपनी जड़े अतल गहराई तक जमा दी हैं। उसने आज राष्ट्रभाषा, राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में अपनी पहचान बना दी है। इसके अलावा मातृभाषा, संचारभाषा एवं माध्यम भाषा के रूप में भी वह सफल रुप में व्यवहृत है।

3.3.4 विश्वभाषा के रूप में हिंदी :

हिंदी भाषा ने अपनी हजारों वर्षो की यात्रा करते-करते वैश्विक स्तर पर अपनी व्याप्ति बढ़ा दी है। भारत के विशाल भूखंड में व्याप्त हिंदी विश्वव्यापी बन गई है। उसका यह विस्तार केवल सरकारी सहाय्यता से नहीं बरसों तक वह साहित्य और आमजन की भाषा बनी रही, और अब बाजार, मनोरंजन और विज्ञान की भाषा बन गई है। वर्तमान में यह किसी की प्रतिद्वंद्वी के रूप में नहीं है इसने देश-विदेश की भाषाओं के शब्दों को अपने में समाहित कर दिया है, तभी तो वह इतना विशाल रूप धारण कर चुकी है।

पाँच उपभाषाओं (पश्चिमी हिंदी, राजस्थानी हिंदी, पूर्वी हिंदी, बिहारी हिंदी, पहाडी हिंदी) और अठारह बोलियों के रूपों को लेकर केवल पश्चिमी हिंदी की एकबोली खडीबोली ने राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा, माध्यम भाषा, संचार भाषा, साहित्यिक भाषा, कंप्युटर की भाषा, मातृभाषा और वर्तमान में विश्वभाषा आदि कई रूप धारण किए हैं। अत: निश्चित ही हिंदी का भविष्य उज्वल है।

भारतीय लोग कुली, मजदूर, रोजगार हेतु पश्चिमी देशों में गए हैं। तो पूर्वी देश धर्म, संस्कृति एवं स्नेह की वजह से निकटवर्ती बन गए हैं। इसके फलस्वरूप हिंदी का अपना वैश्विक महत्त्व बढ़ गया है। प्रवासी भारतीयों के कारण विश्व में फीजी, मॉरीशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद (ट्रिनिडाड) आदि देशों में हिंदी प्रतिष्ठित थी। अब इन देशों के अलावा हिंदी ने हॉलैण्ड, गुयाना, दक्षिण अफ्रिका, इंग्लैंड, इटली, चीन, अमेरिका, कॅनाडा, कोरिया, जर्मनी, फ्रान्स, रूस, हंगेरी, पोलंड, नेपाल, थाईलंड, जापान आदि देशों तक अपना महत्त्व और व्याप्ति बढ़ा दी है।

आज विश्व के महान देशों ने हिंदी भाषा का महत्त्व जान लिया है। इसी कारण विश्व के महान देशों के लोगों ने बड़े पैमाने पर हिंदी सीखना शुरु किया है। आज चीनी भाषा, अंग्रेजी और हिंदी भाषा में मानो होड़ सी लगी हुई है।

मॉरीशस की हिंदी वहाँ की स्थानीय भाषा क्रियोली, फ्रेंच तथा भोजपुरी से प्रभावित है और सूरीनामी हिंदी डच और भोजपुरी से, हॉलैण्डी हिंदी डच से, त्रिनिदादी हिंदी अंगेजी से, गुयानी-अंग्रेजी, भोजपुरी से। उसी तरह दक्षिण अफ्रीकी; हिंदी, अंग्रेजी और भोजपुरी से, इटालीयन हिंदी इतालवी से, नेपाली हिंदी संस्कृत और मैथिली से, जापानी हिंदी, जापानी से तथा थायलंड हिंदी संस्कृत से प्रभावित है।

मॉरीशस में हिंदी के विकास के लिए 12 जून, 1926 को मोताई लांग में 'तिलक विद्यालय की स्थापना हुई तो 24 दिसम्बर, 1935 हिंदी प्रचारिणी सभा की। हिंदुस्थानी, आर्य पत्रिका, आर्योदय, सनातनधर्म, आर्यवीर, अनुराग, बालसखा, शांतिदूत, पंकज, सुमन आदि पत्रिकाओं के साथ यहां कई स्वैच्छिक हिंदी सेवा संगठन कार्यरत हैं। 24 दिसम्तबर, 1993 चौथा विश्व हिंदी सम्मेलन भी मॉरीशस में ही सम्पन्न हुआ था।

दक्षिण अफ्रीका में 1948 में पं. नरदेव वेदालंकार के सहयोग से 'हिंदी शिक्षा संघ' की स्थापना हुई; जहाँ हिंदी मातृभाषिक लोगों की संख्या एक लाख से ऊपर है। भवानी दयाल संन्यासी ने 'हिंदी' नामक सप्ताहिक पत्र भी यहीं शुरू किया था।

सूरीनाम में सन 1977 में सूरीनाम हिंदी परिषद की स्थापना हुई थी। जहाँ 5-9 जून, 2009 में सातवाँ अन्तर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन हुआ था। यहाँ सरस्वती और आर्य दिवाकर पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है।

त्रिनिदाद में 1952 में 'हिंदी एज्यूकेशन बोर्ड' की स्थापना से हिंदी प्रचार प्रसार का कार्य शुरु हुआ। पाँचवा हिंदी विश्व सम्मेलन 4 - 8 अप्रैल, 1996 में यहाँ सम्पन्न हुआ था। जहाँ कबीर पंथियों का एक प्रमुख समूह है। सन् 1986 से स्थापित हिंदी निधी से यहाँ हिंदी पढ़ाई जाती है।

गुयाना में टूटल भाखा (भाषा) के रूप में हिंदी परिचित है। 1955 ई. से 'गुयाना हिंदी प्रसार सभा' कार्यरत है। यहाँ आर्य-ज्योति, ज्ञानदा, अंग्रोसी आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं।

म्यांमार (बर्मा) में 1950 ई. में बर्मा हिंदी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई थी। वास्तव में यहाँ 1936 ई. में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का केंद्र खुला था। यहाँ आर्य युवक जागृति, 'ब्रह्म भूमि' आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ है।

लंदन में 14 - 18 सितम्बर 1999 ई. में छठा हिंदी विश्व सम्मेलन सम्पन्न हुआ था। इस सम्मेलन में ''गगणांचल'' पत्रिका का विशेषांक प्रकाशित हुआ था। लंदन और कैंब्रिज विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन, अध्यापन, अनुसंधान आदि कार्य चलता है। अमरदीप, प्रवासिनी आदि हिंदी पत्रिकाएँ यहां प्रकाशित होती हैं।

अमेरिका के 30 विश्वविद्यालयों में हिंदी का पठन-पाठन होता है। प्रधानमंत्री मनमोहनसिंह की सरकार में विदेश राज्यमंत्री आनंद शर्मा के नेतृत्त्व में आठवाँ विश्वहिंदी सम्मेलन अमेरिका में हुआ था। रूस के आठ

(08) विश्व विद्यालयों में, जर्मनी के सोलह (16) तथा अन्य देशों में भी हिंदी भाषा का अध्ययन अध्यापन शुरू है।

10 - 14 जनवरी, 1975 ई. में नागपुर (भारत) में महासचिव तथा मराठी भाषिक हिंदी साहित्यकार अनंत गोपाल शेवडे की उपस्थिति में प्रथम विश्वहिंदी सम्मेलन का आयोजन हुआ था। 28 - 30 अगस्त 1976 को मॉरीशस में द्विवितीय सम्मेलन सम्पन्न हुआ था, तो तीसरा; दिल्ली में 28-30 अक्तूबर 1983 को इंदिरा गांधी के नेतृत्त्व में सम्पन्न हुआ था। 22-24 सितम्बर 2012 को नौवां विश्व हिंदी सम्मेलन जोहान्सबर्ग में संपन्न हुआ था।

संक्षेप में, हिंदी भाषा देश में ही नहीं समुद्री पार भी अपनी जड़े मजबूत कर चुकी है। विश्व में उसके प्रचार प्रसार हेतु हिंदी सेवा संस्थाएँ, परिषद, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, इंटरनेट, विराट जनतंत्र, भारत का विशाल मार्केट, हिंदी फिल्में, हिंदी भाषा में रचित साहित्य, विदेशों में बसे हिंदी भाषिक भारतीय लोग, हिंदी प्रेमी, वैश्विकरण, और विदेशों में भारत और भारतीय संस्कृति का बढ़ता महत्त्व आदि सभी बातें हिंदी भाषा के बढ़ते चरण में अहम् भूमिका निभा रही हैं। आज विश्व में बाजार की भाषा के रूप में हिंदी की पहचान बढ़ गई है।

3.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न ।

अ) निम्नलिखित प्रश्नों के नीचे दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1) शौरसेनी अपभ्रंश से .... भाषा का विकास हुआ ।

क) पश्चिमी हिंदी   ख) अर्धमागधी   ग) बिहारी   घ) महाराष्ट्री

2) पश्चिमी हिंदी की .... बोली है।

क) खडीबोली   ख) जयपुरी   ग) भोजपुरी   घ) बघेली

3) हिंदी भाषा का .... वर्षों का इतिहास है।

क) 1000   ख) 1500   ग) 500   घ) 1200

4) आदिकालीन हिंदी में अपभ्रंश के .... स्वर थे।

अ) आठ   ख) सात   ग) पाँच   घ) छ:

5) आदिकालीन हिंदी में अधिकांश स्वर .... भाषा के थे।

अ) पालि   ख) संस्कृत   ग) अपभ्रंश   घ) प्राकृत

6) .... आदिकालीन साहित्यकार हैं।

क) नुसरती   ख) कुली   ग) शाह मीराजी   घ) जायसी

7) मध्यकालीन हिंदी पर .... भाषा का अधिक प्रभाव था।

अ) फारसी ख) तुर्की ग) उर्दू घ) स्पेनी

8) आधुनिक कालीन हिंदी में अंग्रेजी के प्रभाव स्वरूप .... ध्वनि प्रयुक्त है।

अ) औ ख) ऑ ग) ड घ) ऐ

9) आधुनिक काल में .... के कारण हिंदी का व्याकरण स्थिर हुआ।

क) महावीर प्रसाद द्विवेदी ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी
ग) जयशंकर प्रसाद घ) कामता प्रसाद

10) .... शब्द तत्सम है।

क) कृष्ण ख) कान्ह ग) किशन घ) किशुन

11) .... शब्द तद्भव है।

क) चाँद ख) चन्दर ग) चंद्र घ) चन्द्रमा

12) 'कबड्डी' शब्द .... है।

क) तत्सम ख) तद्भव ग) देशज घ) अर्धतत्सम

13) जो शब्द पूरी तरह तत्सम नहीं होते वे .... कहलाते हैं।

क) अर्धतत्सम ख) तद्भव ग) देशज घ) विदेशी

14) 'कराटे' शब्द .... भाषा का है।

क) स्पेनी ख) जापानी ग) जर्मनी घ) तुर्की

15) 'रेल' शब्द .... भाषा का है।

क) पुर्तगाली ख) फ्रांसीसी ग) अंग्रेजी घ) अरबी

16) राष्ट्र की भावनात्मक एकता को अभिव्यक्त करने का माध्यम .... भाषा होती है।

क) मातृभाषा ख) राजभाषा ग) कृत्रिम भाषा घ) राष्ट्रभाषा

17) भारत की राष्ट्रभाषा .... है।

क) हिंदी ख) अंग्रेजी ग) उर्दू घ) गुजराती

18) .... राज्य में हिंदी राज्यभाषा और राजभाषा के रुप में व्यवहृत है।

क) तमिलनाडू ख) महाराष्ट्र ग) गुजरात घ) उत्तर प्रदेश

19) हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए महात्मा गांधीजी ने .... भाषा का त्याग कर दिया था।

क) उर्दू ख) संसकृत ग) गुजराती घ) अंग्रेजी

20) प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन .... में सम्पन्न हुआ था।

क) त्रिनिदाद ख) मॉरीशस ग) लंदन घ) नागपुर

21) देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जाने पर जनता .... भाषा का प्रयोग करती है।

क) राजभाषा ख) राज्यभाषा ग) मातृभाषा घ) संपर्क

22) मॉरीशस की हिंदी भाषा पर .... भाषा का प्रभाव है।

क) अंग्रेजी ख) क्रियोली ग) डच घ) गुयानी

23) .... में कबीर पंथियों का बड़ा समूह है।

क) सूरीनाम ख) गुयाना ग) त्रिनिदाद घ) म्यांमार

24) .... देश में हिंदी मातृभाषियों की संख्या एक लाख के ऊपर है।

क) गुयाना ख) दक्षिण अफ्रिका ग) इटली घ) सूरीनाम

25) जर्मनी के .... विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का अध्ययन अध्यापन शुरू है।

क) सोलह ख) आठ ग) तीस घ) दो

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए।

1) हिंदी भाषा की कितनी उपभाषाएँ हैं?

2) हिंदी भाषा के विकास का मध्यकाल कहाँ से कहाँ तक माना गया है ?

3) मध्यकाल में किस आंदोलन के कारण अधिक मात्रा में साहित्य लिखा गया ?

4) आधुनिककालीन हिंदी में राजसभा तथा लोकसभा के लिए किस शब्द का प्रयोग होने लगा?

5) किसी प्राचीन या भूतपूर्व भाषा से ज्यों के त्यों ग्रहण किए शब्द किस नाम से पहचाने जाते हैं?

6) अंग्रेजी से लगभग कितने शब्द हिंदी भाषा में आए हैं?

7) दो भाषाओं के योग से किस प्रकार के शब्द बनते हैं ?

8) स्वतंत्र और स्वाभिमानी देश अपने लिए किस भाषा का निर्धारण करता है?

9) राजकाज के लिए किस भाषा का प्रयोग किया जाता है ?

10) भारतीय संविधान की किस धारा से हिंदी को संघ की राजभाषा घोषित किया है?

11) हिंदी भाषा कब से राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई है ?

12) संपर्क भाषा का आशय किस भाषा रुप से है ?

13) 1961 ई. की जनगणना के अनुसार भारत में कितनी भाषाएँ बोली जाती हैं?

14) भारत में प्राचीन काल से किस देश की भाषा संपर्क भाषा रही है ?

15) पूर्वी देशों से भारत का संबंध किस कारण बढ़ा है ?

16) 1926 ई. में मॉरीशस में किस विद्यालय की स्थापना हुई ?

17) सातवाँ अन्तर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन किस देश में हुआ था?

18) गुयाना में हिंदी भाषा किस रूप में प्रचलित है ?

19) अमरिका के कितने विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्यापन किया जाता है?

20) नौवां विश्वहिंदी साहित्य संम्मेलन किस देश में संपन्न हुआ?

3.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ :

अधिनियम (ऐक्ट) - विधान मंडल द्वारा पारित या स्वीकृत विधी।

व्यवहृत - प्रचलित, अनुष्ठित, व्यवहार या प्रयोग में लाया हुआ।

व्यवधान - बीच में पडनेवाली वस्तु, बाधा।

अपभ्रंश - नीचे गिरना, पतन; बिगाड; शब्द का विकृत रूप प्राकृत भाषाओं का परवर्ती रूप जिनसे उत्तर भारत की आधुनिक आर्य भाषाओं की उत्पत्ति मानी जाती है।

चीनांशुक - रेशमी कपडा; चीन में बननेवाला या चीन से आनेवाला रेशमी कपड़ा।

तुरुप - ताश का एक खेल जिसमें प्रधान माने हुए रंग का छोटे से छोटा पत्ता अन्य रंग के बड़े से बड़े पत्ते को काट सकता है, सेना का दस्ता।

प्रतिवेदन (रिपोर्ट) - किसी घटना, कार्य, योजना आदि के संबंध में छानबीन।

संविधिक - विधानसभा द्वारा स्वीकृत वह लिखित विधान जो स्थायी विधि (कानून) के रूप में हो।

अक्षुण्ण - अखंडित, अभग्न।

प्रावधान - किसी कानून के साथ कोई शर्त रख देने का कार्य, उपबंध प्रयोजन।

इतावली - इटली देश संबंधी।

3.6 स्वयं-अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

अ) 1) (क) - पश्चिमी हिंदी
2) (क) - खडीबोली
3) (क) 1000
4) (क) आठ
5) (ग) अपभ्रंश
6) (ग) शाह मीराजी
7) (क) फारसी
8) (ख) ऑ
9) (क) महावीर प्रसाद द्विवेदी
10) (क) कृष्ण
11) (क) चाँद
12) (ग) देशज
13) क) अर्धतत्सम
14) (ख) जापानी
15) (ग) अंग्रेजी
16) (घ) उत्तर प्रदेश
17) (क) हिंदी
18) (घ) उत्तर प्रदेश
19) (ग) गुजराती
20) (घ) नागपुरी
21) (घ) संपर्क भाषा
22) (ख) क्रियोली
23) (ग) त्रिनिदाद
24) (ख) दक्षिण अफ्रिका
25) (क) सोलह

आ) 1) हिंदी भाषा की पाँच उपभाषाएँ हैं।
2) हिंदी भाषा के विकास का मध्यकाल 1500 ई. से 1800 इ. तक है।
3) मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के कारण अधिक मात्रा में साहित्य लिखा गया।
4) आधुनिक काल में राजसभा तथा लोकसभा के लिए 'सदन' शब्द का प्रयोग होने लगा।
5) किसी प्राचीन या भूतपूर्व भाषा से ज्यों के त्यों ग्रहण किए गए शब्द तत्सम नाम से पहचाने जाते हैं।
6) अंग्रेजी के लगभग 3500 शब्द हिंदी भाषा में आए हैं।
7) दो भाषाओं के योग से संकर प्रकार के शब्द बनते हैं।
8) स्वतंत्र और स्वाभिमानी देश अपने लिए राष्ट्रभाषा का निर्धारण करता है।
9) राजकाज के लिए राजभाषा का प्रयोग किया जाता है।

10) भारतीय संविधान की 343(1) धारा से हिंदी को संघ की राजभाषा घोषित किया है।

11) हिंदी भाषा 14 सितम्बर, 1949 ई. से राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई है।

12) संपर्क भाषा का आशय जनभाषा से है।

13) 1961 ई. की जनगणना के अनुसार भारत में बारह सौ भाषाएँ बोली जाती हैं।

14) प्राचीन काल में मध्यदेश की भाषा संपर्क भाषा रही है।

15) धर्म और संस्कृति के कारण भारत का संबंध पूर्वी देशों से बढ़ा है।

16) 1926 ई. में मॉरीशस में तिलक विद्यालय की स्थापना हुई थी।

17) सातवाँ अन्तरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन सूरीनाम में हुआ था।

18) गुयाना में हिंदी भाषा 'टूटल भाखा' (भाषा) के रूप में प्रचलित है।

19) अमेरिका के तीस विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्यापन किया जाता है।

20) नौवां विश्व हिंदी साहित्य सम्मेलन जोहान्सबर्ग में हुआ था।

3.7 सारांश :

1) हिंदी भाषा का जन्म शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ। 'हिंदी' पाँच उप-भाषाओं अथवा बोली समूहों (पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, राजस्थानी, पहाड़ी और बिहारी हिंदी) का सामूहिक नाम है। वर्तमान हिंदी पश्चिमी हिंदी की एक बोली खडी बोली है।

2) हिंदी भाषा की विकास यात्रा को तीन कालों में विभाजित किया गया है। (1) आदिकाल 1000 ई. से 1500 ई. तक (2) मध्यकाल (1500 ई. से 1800 ई. तक) (3) आधुनिक काल 1800 ई. से अब तक)

3) हिंदी भाषा के शब्द समूह में तत्सम, तद्भव, देशज, अर्धतत्सम, संकर और विदेशी शब्द प्राप्त होते हैं इसी कारण हिंदी शब्द भंडार में वृद्धि हो गई है अर्थात आज हिंदी एक संपन्न भाषा बन गई है। आज वाक्यरचना, मुहावरा तथा लोकोक्ति के क्षेत्र में वह प्रभावशाली भाषा है।

4) हिंदी के राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा, आदि रुप हैं। मगर आज 'विश्वभाषा' के रूप में वह ऊँचाई पर पहुँच गई है।

3.8 स्वाध्याय :

अ) लघुत्तरी प्रश्न ।

1) हिंदी भाषा के आदिकाल का सामान्य परिचय दीजिए।

2) हिंदी भाषा के मध्यकाल का सामान्य परिचय दीजिए।

3) हिंदी भाषा के आधुनिक काल का सामान्य परिचय दीजिए।

4) हिंदी के तत्सम शब्दों पर प्रकाश डालिए।

5) हिंदी के शब्द समूह पर प्रकाश डालिए।

6) विश्व भाषा के रूप में हिंदी का परिचय दीजिए।

7) हिंदी के विदेशी शब्दों पर प्रकाश डालिए।

आ) टिप्पणियाँ –

1) हिंदी भाषा का उद्भव।

2) हिंदी भाषा के विकास का मध्यकाल।

3) हिंदी भाषा का आधुनिक काल।

4) हिंदी के तद्भव शब्द।

5) हिंदी के तत्सम शब्द

6) देशज शब्द समूह।

7) राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी।

8) राजभाषा हिंदी।

9) संपर्क भाषा हिंदी

10) विश्वभाषा हिंदी

3.9 क्षेत्रीय कार्य :

1) हिंदी भाषा की विविध बोलियों की जानकारी प्राप्त कीजिए।

2) हिंदी भाषा के अन्य सभी रुपों का परिचय प्राप्त कीजिए।

3) अन्य विदेशी भाषा से हिंदी में आए शब्दों की सूची बनाइए।

4) विश्व में अमेरिका, जर्मनी एवं जापान को छोडकर अन्य देशों के कितने विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा में अध्ययन अध्यापन किया जाता है, सूची बनाइए।

5) विज्ञापन में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्दों की सूची बनाइए।

6) महाराष्ट्र में मराठी की कितनी बोलियाँ बोली जाती हैं? सूची बनाइए।

3.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए।

1) हिंदी भाषा और भाषाविज्ञान - डॉ. अशोक के शाह 'प्रतीक'
2) 'गंगनांचल' : नौवां विश्व हिंदी सम्मेलन 22 से 24 सितम्बर 2012 जोहान्सबर्ग।
3) हिंदी भाषा का आधुनिकीकरण - डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया।
4) हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास - उदयनारायण तिवारी
5) साहित्यिक एवं सांस्कृतिक निबंध - डॉ. कैलाशनाथ द्‌विवेदी।

• • •

युनिट – 4

1) हिंदी की बोलियाँ (अवधी, ब्रज, खडीबोली, भोजपुरी, दख्खिनी)
2) लिपि विकास का सामान्य परिचय।
3) देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता।

4.1 उद्‌देश्य।

4.2 प्रस्तावना।

4.3 विषय विवेचन।

4.3.1 हिंदी की बोलियाँ।

4.3.2 लिपि विकास का सामान्य परिचय।

4.3.3 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता।

4.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न।

4.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ।

4.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर।

4.7 सारांश।

4.8 स्वाध्याय।

4.9 क्षेत्रीय कार्य।

4.10 अतिरिक्त अध्ययन।

4.1 उद्‌देश्य :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. बोली शब्द का अर्थ समझ सकेंगे।
2. अवधी बोली का क्षेत्र, अवधी का साहित्य एवं उसकी भाषावैज्ञानिक विशेषताओं से परिचित होंगे।
3. ब्रज बोली का क्षेत्र, ब्रज का साहित्य एवं ब्रज बोली की भाषा वैज्ञानिक विशषताओं से परिचित होंगे।
4. खडीबोली का क्षेत्र, खडीबोली का साहित्य एवं उसकी भाषावैज्ञानिक विशेषताओं से परिचित होंगे।
5. भोजपुरी का क्षेत्र, भोजपुरी का साहित्य एवं उसकी भाषावैज्ञानिक विशेषताओं से परिचित होंगे।

6. दक्खीनी बोली का क्षेत्र एवं उसकी भाषावैज्ञानिक विशेषताओं से परिचित होंगे।

7. लिपि का विकास तथा देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को समझ सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना :

हिंदी भाषा का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। अत: इस विस्तृत क्षेत्र में भाषा का एक रूप मिलना असंभव है। हिंदी में एक कहावत है - 'चार कोस पर बदले पानी आठ कोस पर बानी'। इस कहावत के अनुसार हिंदी भी इसका अपवाद नहीं। भाषा जगह-जगह अलग-अलग रुप धारण करती है। हिंदी नौ प्रदेशों की मातृभाषा है। अत: उसके कई रूप दृष्टिगोचर होते हैं। आज संपूर्ण हिंदी भाषा-भाषी क्षेत्र में हिंदी की लगभग सत्रह बोलियाँ बोली जाती हैं। संख्या के संदर्भ में विद्वानों में मतभेद है। कुल मिलाकर हिंदी भाषा के पांच बोली वर्ग हैं जिन्हें हिंदी की उपभाषाएँ कहा जाता है। इन पांच बोली वर्गों के अंतर्गत कुल सत्रह बोलियाँ आती हैं। बोली के पश्चात, लिपि भाषा के अध्ययन का आधार है। क्योंकि ध्वनियों को रेखाओं में व्यक्त करने की कला ही लिपि कहलाती है। हिंदी भाषा की लिपि देवनागरी है। इसी लिपि का हम वैज्ञानिक अध्ययन करेंगे। देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है, क्योंकि इसमें संसार की लगभग सभी भाषओं की ध्वनियों को उच्चारित करनेवाले लिपि चिह्न मौजूद हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम हिंदी की अवधी, ब्रज, खडीबोली, भोजपुरी, दक्खीनी का क्षेत्र उसका साहित्य एवं भाषावैज्ञानिक विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। लिपि के विकास का अध्ययन करेंगे और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता का भी अध्ययन करेंगे।

4.3 विषय विवेचन :

4.3.1 हिंदी की बोलियाँ (अवधी, ब्रज, खडीबोली, भोजपुरी, दक्खिनी) :

बोलियों की दृष्टि से हिंदी भाषा का विशेष महत्त्व है। इसकी बोलियों की संख्या भारत की ही नहीं विश्व की सभी भाषाओं से अधिक है, क्योंकि यह एक बृहत्तर क्षेत्र की भाषा है। हिंदी बोलियों की सबसे बडी विशेषता यह है कि उनकी संख्या अत्यधिक होने पर भी उनमें परस्पर बहुत साम्य मिलता है। विश्व की शायद ही ऐसी कोई भाषा हो, जिसमें इतनी अधिक बोलियाँ होते हुए भी उनमें काफी साम्य दिखाई देता है। ये बोलियाँ अपनी सीमा रेखा में नहीं हैं, वरन् दूसरी बोली में भी प्रविष्ट होती चली गयी हैं, जिनसे पारस्पारिक साम्य के कारण विभाजन रेखा खींचना कठिन हो जाता है। ध्वनि, व्याकरण, शब्दकोश आदि की दृष्टि से इन सभी बोलियों में साम्य की स्थिति देखकर आश्चर्य प्रतीत होता है। ये सारी बोलियाँ अलग-अलग होते हुए भी संपूर्ण हिंदी प्रदेश के लोगों द्वारा शत- प्रतिशत् समझी जाती हैं।

हिंदी भाषा का क्षेत्र हिमाचल प्रदेश, पंजाब का कुछ भाग, हरियाना, राजस्थान, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश तथा बिहार है। जिसे हिंदी भाषी प्रदेश कहते हैं। पूरे क्षेत्र में हिंदी की पांच उपभाषाएँ हैं, जिनके अंतर्गत मुख्य 17 बोलियाँ हैं, इनके अतिरिक्त हिंदी का एक 'दक्खिनी हिंदी' नामक रूप भी प्रचलित पाया जाता है।

हिंदी भाषा

- 1) पश्चिमी हिंदी
  - 1) खडी बोली (कौरवी)
  - 2) बांगरु (हरियाणवी)
  - 3) ब्रज
  - 4) बुंदेली
  - 5) कनौजी
- 2) राजस्थानी हिंदी
  - 6) मारवाडी
  - 7) जयपुरी
  - 8) मेवाती
  - 9) मालवी
- 3) पूर्वी हिंदी
  - 10) अवधी
  - 11) बघेली
  - 12) छत्तीसगढी
- 4) बिहारी हिंदी
  - 13) भोजपुरी
  - 14) मगही
  - 15) मैथिली
- 5) पहाडी हिंदी
  - 16) पश्चिमी पहाडी
  - 17) मध्यवर्ती पहाडी (कुमायूँनी, गढ़वाली)

उपरोक्त तालिका में हिंदी भाषा को पांच वर्गों में विभाजित किया गया है। पश्चिमी हिंदी में 5 बोलियाँ, राजस्थानी हिंदी में 4 बोलियाँ, पूर्वी हिंदी में 3 बोलियाँ, बिहारी हिंदी में 3 बोलियाँ, पहाडी हिंदी में 2 बोलियाँ मिलती हैं। यहाँ अवधी, ब्रज, खड़ीबोली, भोजपुरी, तथा दक्खिनी हिंदी का सामान्य परिचय कर लेंगे।

1) **अवधी :**

यह पूर्वी हिंदी की एक प्रमुख बोली है। यह उत्तर प्रदेश के अवध क्षेत्र की बोली है। अवध का प्राचीन नाम 'कोसल' था। अतएव इसे 'कोसली' भी कहते हैं।

इसके विकास के संबंध में विद्वानों में एकमत नहीं है। जार्ज ग्रियर्सन इसकी उत्पत्ति अर्ध मागधी से मानते हैं। डॉ. बाबूराम सक्सेना के अनुसार इसका संबंध 'पालि' से अधिक है। डॉ. उदयनारायण तिवारी अवधी की उत्पत्ति किसी बोलचाल की भाषा से मानते हैं। इन तीनों मतों में अंतिम मत अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। खडीबोली की भाँति अवधी का विकास भी कोसल प्रदेश में बोली जानेवाली मध्यकालीन किसी जनभाषा से जुडा हुआ है।

i) **क्षेत्र :**

अवधी का क्षेत्र अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत है। यह लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, खीरी, फैजाबाद, गोंडा, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़ तथा बाराबंकी में बोली जाती है। इसके अतिरिक्त गंगा के पार इलाहाबाद, फत्तेहपुर, कानपुर, मिर्जापुर, एवं जौनपुर जिलों के कुछ भागों में अवधी बोली जाती है।

ii) **अवधी के क्षेत्रीय रुप :**

डॉ. बाबूराम सक्सेना के अनुसार अवधी के निम्न तीन रूप हैं-

1) **पश्चिमी अवधी :** इसमें खीरी (लखीमपुर), सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव तथा फतेहपुर की अवधी आती है।

2) **केंद्रीय अवधी :** इसमें बहराइच, बारबंकी, एवं रायबरेली की अवधी आती है।

3) **पूर्वी अवधी :** पूर्वी अवधी के अंतर्गत गोण्डा, फैजाबाद, सुलतानपुर, इलाहाबाद, जैनापुर, तथा मिर्जापुर की अवधी का समावेश है।

iii) **साहित्य :**

अवधी में तीन धाराओं का साहित्य मिलता है। 1) संतकाव्य, 2) प्रेमकाव्य, 3) रामकाव्य।

1) **संतकाव्य :** संतकाव्य परंपरा के उन कवियों के - जिन्होंने अवधी को अपने काव्य का माध्यम बनाया है - मलूकदास, मथुरादास, धरनीदास, संतचरणदास, दयाबाई, सहजो बाई आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

2) **प्रेमकाव्य :** प्रेमकाव्य के अधिकांश कवियों का निवासस्थान अवध प्रदेश होने के कारण उनके काव्य में 'अवधी' भाषा का प्रयोग होना स्वाभाविक है। प्रेमकाव्य के अवधी भाषा के कवियों में मलिक मुहम्मद जायसी सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनका 'पद्मावत' अवधी भाषा का उत्कृष्ट ग्रंथ है।

3) **रामकाव्य :** रामभक्तिशाखा के मुर्धन्य कवि हैं; गोस्वामी तुलसीदास। इनका 'रामचरित मानस'

अवधी भाषा का उत्कृष्ट ग्रंथ है। गोस्वामी जी की रचनाएँ, शुद्ध, परमार्जित तथा व्याकरणसम्मत हैं।

iv) **विशषेताएँ :**

1) अवधी में 'ण' के स्थान पर 'न' का प्रयोग प्रचलित हुआ।

2) इसमें 'ऐ' को 'अई' तथा 'औ' को 'अऊ' कहा जाता है; जैसे, जैसे-जइसे, और-अउरत

3) 'श', 'स' का उच्चारण 'स' किया जाता है; जैसे, विश्वास-विस्वास, भूषण-भूसन।

4) व्यक्तिवाचक तथा विदेशी शब्दों में 'वा', 'इवा' लगाया जाते हैं; जैसे, जगदीसवा, रजिस्टरवा।

5) बहुवचन के लिए कहीं-कहीं एकवचन का प्रयोग होता है; जैसे, तोहार (तुम के लिए)

6) 'न', 'न्ह', 'नि', 'न्हि' लगाकर बहुवचन बनाए जाते हैं; जैसे लोगन, लरिकन।

२) ब्रज :

ब्रज का पुराना अर्थ 'पशुओं' या 'गौओं का समूह' या 'चरागाह' आदि है। पशुपालन के प्राधान्य के कारण यह क्षेत्र कदाचित ब्रज कहलाता है, और इसी आधार पर इसकी बोली ब्रज कहलाती है। इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से हुआ है। ब्रज पश्चिमी हिंदी की प्रमुख बोली है।

i) **क्षेत्र :**

इसका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़, मथुरा, आगरा, बुलन्द शहर, एटा, मैनपुरी, बदायूँ, रायबरेली तथा हरियाणा के पास गुड़गाँव जिले का पूर्वी भाग, मध्यप्रदेश में ग्वालियर जिले का पश्चिमी भाग अदि क्षेत्र में ब्रज व्यवहृत है। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के बरेली, पीलीभीत, शाहजहाँपुर, फार्रूखाबाद, हरदोई, इटावा तथा कानपुर के जिलों में भी ब्रज ही बोली जाती है। किंतु ब्रजभाषा का प्रमुख क्षेत्र मथुरा, अलीगढ़ तथा आगरा ही है।

ii) **साहित्य :**

ब्रजभाषा का साहित्य अत्यंत समृद्ध एवं विकसित है। विश्व की अनेक प्रतिष्ठित भाषाओं से कई अधिक साहित्य रचना इसमें उपलब्ध हैं। फिर भी भाषा-वैज्ञानिक जगत् में इसकी गणना बोली के रूप में होती है। महाकवि सूरदास तथा अष्टछाप के कवियों, रीतिकालीन कवियों के अतिरिक्त अनेक आधुनिक कवियों ने भी इसमें सुंदर साहित्य लिखा है। ब्रज भाषा में गद्य-साहित्य भी मिलता है। हिंदी साहित्य के मध्यकाल में यह संपूर्ण उत्तरी भारत की प्रमुख साहित्य भाषा रही है। ब्रज हिंदी की अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाषा रही है। सूर, नंददास, तुलसीदास, रसखान, रहीम, बिहारी, मतिराम, भूषण, देव, रत्नाकर, भारतेंदू आदि ब्रज के सुप्रसिद्ध कवि रहे हैं। ब्रज में लोकसाहित्य भी प्रचूर मात्रा में मिलता है। इसके बोलने वालों की संख्या एक करोड से अधिक है।

ब्रज भाषा के नाम के साथ जुडा हुआ 'भाषा' शब्द इसके अतीत के गौरव का परिचायक है। माधुर्य

एवं समासोक्ति की दृष्टि से यह भाषा हिंदी में सर्वोत्कृष्ट है तथा मध्यप्रदेश में विकसित होने के कारण इसमें संस्कृत एवं प्राकृत की श्रेष्ठ उपलब्धियाँ प्रकट हुई हैं। गाँववारी, ढोलपुरी, भरतपुरी, अंतर्वेदी, जादोबारी, भुक्सा अदि इसकी प्रमुख उपबोलियाँ हैं।

iii) **ब्रज की विशेषताएँ :**

1) खडी बोली में जहाँ 'ए', 'ओ' पाया जाता है, वहाँ ब्रजभाषा में 'ऐ' और 'औ' पाया जाता है; जैसे; - तो, को, पे, में ने के स्थान पर तौ, कौ, पै, मैं, नै पाया जाता है। घोडा-घोडौ, भला-भलौ आदि।

2) खडीबोली के शब्द के अंत में जहाँ पर 'आ', मिलता है, ब्रजभाषा में उसके स्थान पर 'ओ', और कहीं-कहीं 'ओं' भी मिलता है - जैसे - आया, होता, जाऊँगा, दूजा का ब्रजभाषा में आयो, होतो, जाऊँगो, दूजो, करैगो आदि रूप मिलते हैं।

3) काल की दृष्टि से खडीबोली में भूत काल के लिए जहां 'था' का प्रयोग होता है वहां ब्रज में 'हुसौ' या 'हौ' का।

4) भविष्य काल का रूप 'गौं' जोडने से बनता है, जैसे - मारौंगौ (मारुंगा)

5) ब्रज; हिंदी की समस्त बोलियों में कोमल प्राण बोली मानी जाती है।

6) ब्रज के प्रमुख अव्यय हैं - अजौ, पुनि, जिमि, किमि।

7) सर्वनामों में 'मैं', के स्थान पर 'हौ' का प्रयोग होता है।

8) प्रश्नवाचक - को, कौन के स्थान पर काहि, कहा।

9) अनिश्चयवाचक अव्यय हैं - कोई, कोड, काहू, कहू आदि।

3) **खडीबोली :**

इसके अन्य नाम हिंदोस्तानी, नागरी हिंदी, सरहिंदी तथा कौरवी भी है। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार 'खडीबोली' शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है - 'एक तो मानक हिंदी के लिए जिसकी तीन शैलियाँ हैं - 'हिंदी', 'उर्दू' और हिंदुस्तानी के लिए और दूसरे उस लोकबोली के लिए जो दिल्ली, मेरठ में तथा उसके आस-पास बोली जाती है। इस्लाम के प्रभाव के कारण हिंदी की अन्य ग्रामीण बोलियों की अपेक्षा खडीबोली में अरबी-फारसी के कुछ शब्द आ गए हैं। किंतु उनमें पर्याप्त ध्वन्यात्मक परिवर्तन भी हो गया है - जैसे-मतलब 'मतबल' में गुवाही 'उगाही' में परिवर्तित हो गए हैं।

i) **नामकरण :**

बोली के संदर्भ में 'खडी' नाम का सर्वप्रथम प्रयोग सन 1800 में लल्लू लाल ने किया था। इसके अतिरिक्त सदल मिश्र ने भी 'खडीबोली' नाम का प्रयोग उसी अर्थ में किया है। खडीबोली के नाम के संदर्भ में निम्नलिखित मत प्रचलित हैं -

1) खडीबोली में मूर्धन्य ध्वनियों की अधिकता है। इन कडी ध्वनियों के कारण इसका 'खडी' नाम पडा।

2) कुछ विद्‌वानों की मान्यता है कि इसे फोर्ट विलियम में ब्रज और बांगरू की टेक देकर खडा किया गया, इसलिए इसका नाम 'खडीबोली' हुआ।

आचार्य चंद्रबली पण्डेय ने 'खडी' का अर्थ ठेठ बताया है। गिलक्रिष्ट प्रभृति पश्चिमी विद्‌वानों का मत है कि यह प्रचलित और स्टैण्डर्ड (परिनिष्ठित / खरी) भाषा के रूप में क्रमश: विकसित हुई है, इसलिए इसका नाम खडी बोली पडा। डॉ. हरदेव बाहरी इस मत के समर्थक हैं। इस संदर्भ में उनका कथन है कि ''याद रहे कि इस प्रदेश की भाषा का यह नाम (खडी बोली) तभी पडा जब इसका व्यवहार शिक्षा और साहित्य में 'स्टैण्डर्ड' भाषा' के रूप में होने लगा।

ii) **क्षेत्र :**

शुद्‌ध रूप में खडीबोली सहारनपुर, मुज्जफ्फरनगर, मेरठ, देहरादून का मैदानी भाग, बुलन्दशहर के उत्तरी क्षेत्र में बोली जाती है। इसके अतिरिक्त जिला सहारनपुर के पश्चात यमुना नदी के उस पार इस बोली का क्षेत्र अम्बाला तक व्याप्त है। यह अवश्य है कि अम्बाला के पूर्वी और हिमाचल के कलसिया के पूर्वी भाग में इस पर पंजाबी और पहाडी का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। मुरादाबाद तथा रामपुर जनपदों की बोली भी कौरवी या खडीबोली ही है।

iii) **साहित्य :**

खडीबोली को यदि एक लोक बोली के रूप में लिया जाए तो इसमें लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है जिसमें पवाडे मुख्य रूप में उल्लेख्य हैं। साहित्यिक दृष्टि से यह भाषा अत्यंत समृद्‌ध है। आदिकाल से लेकर अद्यतन काल तक साहित्यकारों ने हिंदी को विकसित किया है। हिंदी, ऊर्दु, हिंदुस्तानी तथा दक्खिनी हिंदी एक सीमा तक खडी बोली पर ही आधारित हैं। विगत 100 वर्षों में इस बोली का आश्चर्यजनक ढंग से विकास हुआ है और साहित्यिक दृष्टि से भी जितनी खडी बोली समृद्‌ध है उतनी कदाचित कोई अन्य बोली या भाषा नहीं। साहित्य की प्रत्येक विधा काव्य, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, पत्र-पत्रिकाएँ आदि की अभिव्यक्ति का माध्यम यही बोली है। साहित्य के अतिरिक्त ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में भी इसका अभुतपूर्व महत्त्व है।

iv) **प्रमुख विशेषताएँ :**

1) स्वर लोप की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है, जैसे - पंडित-पंडत, अंगुठा-गूंठा, धनुष-धनस, इलाज-लाज, मिठाई-मठाई।

2) प्राय: समस्त स्वर सानुनासिक रूप में मिलते हैं - जैसे मंगता, आँक, बिंदी, गईं, गुँगा, लऊँ, बातें, मैं, सोंठ, धौंस।

3) यदि शब्द के आदि में 'ण' आता है, तो उसका उच्चारण नहीं होता किंतु शब्द के मध्य तथा अंत में 'न' के स्थान पर 'ण' बोलने की प्रवृत्ति बहुतायत से पायी जाती है।, जैसे जाना-जाणा, नमक-णिमक, पाकिस्तानी-पाकिस्ताणी, आदि।

4) 'र' का 'ड', 'ड' का 'र' भी हो जाता है, जैसे चपरासी का चपडासी, कुडक का कुर्क आदि।

5) भिन्न व्यंजन संयोग की निम्नलिखित प्रवृत्ति दृष्टव्य है। यमुना - यम्ना, कार्तिकी-कल्फी, बृहस्पती-भिस्पत, द्वादशी-द्वास्सी।

6) इसमें महाप्राण के पूर्व इसी स्थिति में अल्प प्राण का आगम जैसे - देक्खा, भुक्खा, आदि।

7) इसमें अरबी-फारसी के शब्दों का बाहुल्य है।

8) हिंदी की अन्य बोलियों की अपेक्षा खड़ीबोली में बलाघात कुछ जोर से पडता है।

4) **भोजपुरी :**

आधुनिक हिंदी में भोजपुरी भाषा का हिंदी बोलियों में विशेष महत्त्व है। आधुनिक भोजपुरी शाहाबाद जिले का एक परगना है तथा भोजपुर के नाम 'बडका भोजपुर' और 'छोटका भोजपुर' नाम के दो गाँव रह गये हैं।, लेकिन प्राचीन काल में भोजपुर मल्ल जनपद की राजधानी था तथा राजा भोज के वंशजों ने इसे बसाया था। राजा भोज के नाम पर ही इस नगर का नाम भोजपुर रखा गया था। इस क्षेत्र की भाषा का नाम भी भोजपुरी पडा। भाषा के रूप में भोजपुरी का प्रयोग सर्वप्रथम 1789 ई. में किया गया था।

i) **नामकरण :**

भोजपुरी के अतिरिक्त इस भाषा को 'पूरबी' भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त 'भोजपुरिया' भी इसका नाम है। किंतु भोजपुरी नाम ही विशेष प्रसिद्ध है। भोजपुरी की चार प्रमुख बोलियाँ हैं। उत्तरी भोजपुरी दक्षिणी भोजपुरी, पश्चिमी भोजपुरी, तथा नागपुरिया। दक्षिणी भोजपुरी ही मूल भोजपुर की बोली है। इसके अतिरिक्त सारन बोली, गोरखपुरी, छपरहिया तथा सोनपारी भी इसकी बोलियाँ हैं।

ii) **भोजपुरी की उत्पत्ति :**

भोजपुरी का विकास मागधी प्राकृत से हुआ है। चूँकि पूर्वी प्रदेशों की अधिकांश बोलियाँ मागधी से विकसित हुई हैं, अत: कतिपय भाषावैज्ञानिकों ने भोजपूरी को बंगला की उपबोली माना है। किंतु यह एक राजनीतिक वितण्डवाद है और भोजपुरी की प्रकृति हिंदी के अनुरूप हैं, तथा बहुत कुछ पूर्वी हिंदी की प्रमुख बोली अवधी से मिलती है। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी भोजपुरी को मगही और मैथिली से भिन्न मानते हैं किंतु वस्तुत: इसका विकास उन्ही भाषाओं के साथ मागधी से ही हुआ है।

iii) **भोजपुरी का क्षेत्र :**

भोजपुरी के प्रमुख क्षेत्र के अलावा अन्य क्षेत्र में भी भोजपुरी व्याप्त है। इसके मुख्य क्षेत्र के अंतर्गत

उत्तर प्रदेश में बस्ती, गोरखपुर, देवरिया, गाजीपुर, बलिया, बनारस, मिर्जापुर और जैनपुर एवं बिहार में शाहाबाद, छापरा, सारन, चम्पारण, रांची, पलामू जिला आते हैं। रांची पलामू अब झारखण्ड में हैं। भारत से बाहर मॉरिशस आदि देशों में भी भोजपुरी बोलनेवालों की बड़ी संख्या है। हिंदी बोलियों में यह सबसे बड़ी बोली है। इसके बोलने वालों की संख्या साढे तीन करोड से कुछ ऊपर है।

iv) **विदेशी स्वरूप :**

भोजपुरी का प्रसार न केवल हिंदी प्रदेश अपितु भारत के बाहर भी है। भोजपुरी हिंदी की एक मात्र भाषा है, जिसका विस्तार विदेशों में भी है और अनेक राष्ट्रों की मुख्य भाषा के रूप में भोजपुरी प्रतिष्ठित है। अंग्रेजी शासन में 'गिरमिटिया मजदूर' के रूप में भारत के बाहर जाकर नौकरी करने वाले लोग थे। पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के व्यक्तियों की संख्या अधिक थी। जो धीरे-धीरे उन राष्ट्रों की प्रमुख शक्ति बन गए। इसप्रकार उनकी भाषा के रूप में भोजपुरी भी उन राष्ट्रों में प्रतिष्ठित हुई। ऐसे देशों में मारिशस, फिजी, सूरनीम आदि देश उल्लेखनीय हैं।

v) **साहित्य :**

भोजपुरी में प्राचीन साहित्य नहीं मिलता। मध्यकालीन संत साहित्य पर भोजपुरी का प्रभाव अवश्य पडा है। आधुनिक काल में भोजपुरी सहित्य का विकास अवश्य हुआ। राहुल सांकृत्यायन, कृष्णदेव उपाध्याय, चतुरी चाचा, रघुवीर, भिखारी, ठाकूर आदि की रचनाएँ भोजपुरी में मिलती हैं। भोजपुरी आज गद्य और पद्य दोनों में विकसित हो रही है। इसके अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाएँ भी भोजपुरी में प्रकाशित हो रही हैं। भोजपुरी में चलचित्रों का निर्माण भी हो रहा है। भोजपुरी साहित्य अकादमी द्वारा स्वीकृत भाषा है तथा बिहार सरकार ने भोजपुरी अकादमी बनाकर इसके विकास का प्रयत्न किया है। भोजपुरी लोक साहित्य भी अत्यंत समृद्ध है।

vi) **विशेषताएँ :**

1) ऐ, औ का उच्चारण अई, अउ, होता है। जैसे - पइसा, मइला, गुउना।

2) स, श, का ह, बन जाता है। माहटर (मास्टर), अहश्मी (अष्टमी), निहचै-निश्चय।

3) शब्दों के अंतर्गत 'र' का लोप हो जाता है, जैसे - लरिका-लइका, कीर - कइ।

4) व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति भोजपुरी में अधिक मिलती है। चाकू-चाक्कू, ढेर-गल्ला।

5) भोजपुरी में स्वरों की अनुनासिकता उल्लेखनीय है । ढीढ-ढींढ, पापड-पांपड, पियार-पिंयार आदि।

5) **दक्खिनी :**

दक्खिनी हिंदी को हिंदी या हिन्दवी भी कहा जाता है। मुहम्मद तुगलक ने सन् 1327 ई. में देवगिरी

में अपनी राजधानी बनायी थी। देवगिरी का नाम परिवर्तित होकर दौलताबाद हो गया। कुछ समय बाद उसने दिल्ली में राजधानी बनाने का निर्णय लिया तथा राजधानी बदलने के साथ वहाँ की जनता को भी वह अपने साथ ले गया। इसके बाद सन 1923 ई. में फिर से हैद्राबाद में स्वतंत्र निजाम राज्य की स्थापना हुई। इसके साथ ही हैद्राबाद में समय समय पर सैनिक, राज्य कर्मचारी, धर्म-प्रचारक तथा व्यवसाय की खोज में आने वाले अन्य बहुत से लोग हिंदी भाषी थे। यद्यपि ये लोग दक्षिणी और द्रविड भाषाओं के मध्य रहे, तथापि इनके उत्तराधिकारी आज भी भाषा को पीढ़ियों से सुरक्षित किए हुए हैं। इसी भाषा को 'दक्खिनी बोली', 'हिन्दवी' 'हिंदुस्थानी' आदि कहा जाता है।

i) **क्षेत्र :**

गुजरात, महाराष्ट्र और हैद्राबाद में दक्खिनी हिंदी बोली जाती है। वस्तुत: यहाँ दक्खिनी बोलने वाले वही लोग हैं, जो दिल्ली और पंजाब के आस-पास के क्षेत्र से जाकर इन स्थानों पर बसे थे।

ii) **विशेषताएँ :**

1) हरियानी के समस्त स्वर दक्खिनी में भी व्यवहृत हैं। इसमें 'ए' और 'ओ' के ऱ्हस्व और दीर्घ प्रयोग भी मिलते हैं। इसके साथ ही एक स्वर 'उ' और 'ओ' भी व्यवहृत है।

2) 'ह' का उच्चारण पंजाबी की भाँति 'ऐ' होता है, तथा टहलना - टैलना, पहला - पला, ठहरता-ठैरते आदि।

3) कभी दीर्घ स्वरों को ह्रस्व रूप में बोला जाता है, जैसे - अस्मान (आसमान), अदमी (आदमी) भिगना (भीगना), गुँगे (गूंगे) आदि।

4) इस क्षेत्र में मुस्लिम जनता होने के कारण फारसी, अरबी की ध्वनियाँ ज, ख, फ, ग (बिंदू प्रधान) का प्रयोग भी मिलता है।

5) 'ख' के उच्चारण का अधिक अभ्यास होने के कारण दक्खिनी भाषिक 'क' को भी 'ख' उच्चारित करते हैं -खाक का खाख, तडकना-तडखना आदि।

6) इसमें महाप्राण व्यंजनों का अल्पप्राणीकरण करने की प्रवृत्ति है - देक (देख), पिगले (पिघले), समज (समझ), सीदा (सीधा), इदर (इधर) आदि।

7) व्यंजनों के द्वित्व उच्चारण की प्रवृत्ति भी मिलती है - नम्मक (नमक), नद्दी (नदी), गल्ली (गली) आदि।

8) यदि एक ही शब्द में दो मूर्धन्य व्यंजन आते हैं, तो पहला मूर्धन्य व्यंजन दन्त्य व्यंजन में परिवर्तित हो जाता है - गुम्बद का गम्मज, कम्बल का कम्मल, संभलना का समालना आदि।

हिंदी भाषा की जो पांच उपभाषाएँ हैं, उनमें सत्रह बोली वर्ग आते हैं, उनमें से अवधी, ब्रज, खडीबोली, भोजपुरी, के साथ दक्खिनी हिंदी आदि बोलियों का यहाँ विवेचन किया गया है। इन बोलियों की उत्पत्ति, क्षेत्र, साहित्य एवं भाषावैज्ञानिक विशेषताएँ आदि का यहाँ विवेचन किया गया है।

4.3.2 लिपि विकास का सामान्य परिचय :

प्रस्तावना :

लिपि, भाषा के अध्ययन का आधार है, क्योंकि ध्वनियों को रेखाओं में व्यक्त करने की कला ही लिपि कहलाती है। ध्वनियाँ अस्थायी होती हैं, तथा वक्ता और श्रोता के बीच सम्प्रेषण करती हैं। अत: इनके प्रसार की या सम्प्रेषण की एक सीमा होती है। लेकिन लिपि भाषा का वह स्थायी रूप है जो सदियों तक अक्षुण्ण रह सकता है तथा मानव की सभ्यता के विकास में भाषा के इसी लिखित रूप का महत्त्व सर्वोपरी है। इसका प्रसार अति व्यापक है तथा इसके संप्रेषण की कोई सीमा नहीं। लिपि द्‌वारा संसार में कहीं भी कभी भी संप्रेषण किया जा सकता है।

आदिमानव के पास पहले भाषा ही बनी होगी। एक दूसरे से अपनी वस्तुओं को अलग करने के लिए मनुष्य ने कुछ लिखित चिह्न बनाए होंगे। धोबियों के चित्र संभवत: उसी के अवशेष हैं।

4.3.2.1 लिपि शब्द का अर्थ :

'लिपि' शब्द संस्कृत के 'लिप' धातु से बना है। जिसका अर्थ है, 'लपेटना'। मानव भाषा को अंकित करने का साधन लिपि है। जब मनुष्य की शाब्दिक अभिव्यक्ति को सांकेतिक चिह्नो के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए उन चिन्हों में उसका अर्थलीपन किया जाता है, तब लिपि का जन्म होता है। किसी भी भाषा की समृद्‌धि में लिपि का योग सर्वाधिक होता है।

4.3.2.2 लिपि की उत्पत्ति :

लिपि की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न विचारधाराएँ प्रचलित हैं। अधिकांश विद्‌वान यही मानते हैं कि लिपि ईश्वर प्रदत्त होती है। देवनागरी लिपि का विकास ब्राह्मी से माना जाता है। इसका तर्क यह दिया जाता है कि इस लिपि को भगवान ब्रह्मा ने बनाया है, इसीलिए यह ब्राह्मी कहलाती है। परंतु यह सिर्फ एक कल्पना मात्र है। वस्तुत: लिपियों का विकास चित्रों, चिह्नों व आडी-तिरछी आकृतियों से हुआ है। ये चित्र या रेखाएँ मनुष्य ने अपनी तत्कालीन समझ एवं समस्याओं के अनुसार खींची थी, तथा समय-समय पर इसमें सुधार होते रहें और आज उसे यह रूप प्राप्त है।

- **लिपि का इतिहास :**

लिपि का काल एवं स्वरूप विवादास्पद है। निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि कब मानव ने लिपि के रूप में भाव-प्रकाशन का कार्य आरंभ किया। प्राचीनतम उपलब्ध सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है कि, 4000 ई. पू. के मध्य तक लेखन की किसी भी अभिव्यक्ति पद्‌धति का कहीं भी विकास नहीं हुआ था और इस प्रकार के प्राचीनतम अव्यवस्थित प्रयास 10,000 ई. पू. से भी कुछ पूर्व किए गये थे। इसका मतलब इन दोनों के बीच अर्थात, 10,000 ई. पू. से 4,000 ई. पू तक लिपि का विकास धीरे-धीरे होता रहा होगा। उपलब्ध विकास से यही तथ्य सामने आता हैं कि चित्रलिपि ही मनुष्य की आरंभिक लिपि रही होगी। प्राचीन मनुष्य द्‌वारा गुफांओं में अंकित चित्र ही इस तथ्य का आधार है।

लिपियों का विकास :

अ.क्र.	काल	लिपि
1.	आरंभिक काल	चित्र लिपि
2.	विकास काल	सूत्र लिपि
3.	मध्यकाल	प्रतीकात्मक लिपि
4.	उत्तर मध्य काल	भावमूलक लिपि
5.	आधुनिक काल	ध्वनिमूलक लिपि
6.	अतिआधुनिक काल	इलेक्ट्रॉनिक लिपि, कंप्यूटर भाषाएँ।

आरंभ में लिपियाँ चित्रमूलक थीं वे धीरे-धीरे चित्र से धागे के रूप में बदली और प्रतीक व भाव से होते हुए ध्वनिमूलक में पहुँची। इसका विकासक्रम उपरोक्त रूप से हैं।

- **चित्र लिपि :**

चित्रों के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति चित्र लिपि के नाम से अभिहित होती है। यह भाव व्यक्त करने का आदिम तरीका है। प्राचीन काल में मानव गुफाओं की दीवारों पर या अन्य किसी वस्तु पर, पेड की छाल, लकडी, हड्डी या सींग जैसे कठोर सतहों पर आडी-तिरछी रेखाओं को उकेरकर लिखा करता था। ऐसे पुराने चित्र मेरोपोटामिया, ब्रिटेन, युनान, सीरिया, स्पेन, पुर्तगाल, ब्राजील, कैलिफोर्निया, आस्ट्रेलिया आदि जगहों पर मिलते हैं। जैसे -

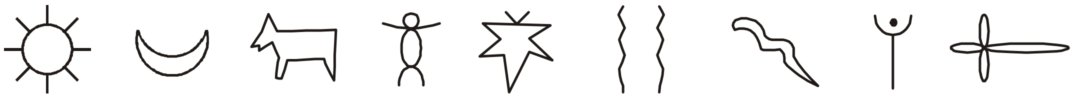

चित्र लिपि में किसी वस्तु को उसके चित्र द्वारा दिखाया जाता था। प्राचीन काल की यह लिपि, एक प्रकार से अंतर्राष्ट्रीय लिपि थी। सर्वत्र लोग इसे समझ लेते थे। चित्र लिपि में स्थूल वस्तुओं का चित्रण तो हो सकता था। किंतु विचारों एवं भावों की अभिव्यक्ति इसमें संभव नहीं थी। आदमी का चित्र बनना सरल था पर किसी विशिष्ट व्यक्ति को चित्र के माध्यम से अंकित करना कठिन था। साथ ही साथ समाज में ऐसे कुछ व्यक्ति भी रहे होंगे जिन्हें चित्र निकालना संभव न था। वैसे लोगों को अपने विचार व्यक्त करना अत्यंत कठिन था।

यह कहा जाता है कि चित्र लिपि विकसित होते-होते प्रतीकात्मक हो गई। अत्यंत शीघ्रता की स्थिति में किसी व्यक्ति अथवा वस्तु का चित्रण पूर्ण न होने पर उसके स्थान पर प्रतीक मात्र से ही काम चलाया। ऐसी स्थिति में प्रतीकात्मक या रूढि-चिह्नों को याद रखने की आवश्यकता महसूस होने लगी।

सूत्र लिपि :

यह लिपि विश्व के अनेक देशों में प्रचलित थी। इस लिपि को आज भी भारत सहित अनेक देशों में देखा जा सकता है। स्मरण के लिए आज भी लोग रूमाल, पल्लू आदि में गांठ देते हैं। प्राचीन काल में सूत्र, रस्सी, पेड की खाल आदि में गांठ लगाई जाती थी। धार्मिक कृत्यों में गांठ बांधना, पिपल के वृक्ष पर धागे के चक्कर आदि इसी के उदाहरण हैं। सूत्र लिपि को निम्न प्रकारोंसे व्यक्त किया जाता था -

- रस्सी में रंग-बिरंगे सूत्र बांध कर।
- रस्सी को रंग-बिरंगे रंग से रंगा कर ।
- रस्सी या जानवरों की खाल आदि में विभिन्न रंगों के मोती, घोंघे, मूंगे या मनके इत्यादि बांध कर।
- रस्सियों की विभिन्न लंबाईयाँ बनाकर।
- रस्सियों की विभिन्न मोटाईयाँ बनाकर।
- रस्सियों में भाँति-भाँति की विभिन्न दूरियों पर गांठ लगाकर।
- डंडे के विभिन्न स्थानों पर विभिन्न मोटाईयों या रंगों की रस्सियाँ बाँधकर।

इस तरह के लेखन का उल्लेख 5 वीं सदी के ग्रंथकार रेहोडोटस् ने किया। पेरू, चीन, तिब्बत, बंगाल, जपान के द्विप, टंजानियाँ आदि जगह सूत्र लिपि मिलती है।

- **रंजानियाँ की सूत्रलिपि :**

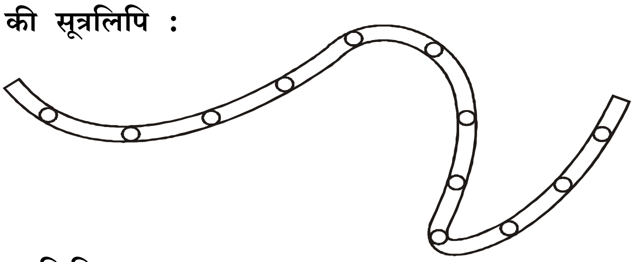

- **प्रतीकात्मक लिपि :**

इस लिपि में संकेतों के माध्यम से संदेश संप्रेषण होता था। भावाभिव्यक्ति प्रतिकात्मक थी। इसे शुद्ध रूप से लिपि नहीं कह सकते, पर दूरस्थ व्यक्ति के लिए भावाभिव्यक्ति का एक साधन था। कई देशों और कबीलों में इसका प्रचार उस काल में प्रचलित था। तिब्बती-चीनी सीमा पर मुर्गे के बच्चे का कलेजा, उसकी चर्बी के तीन टूकडे तथा एक मिर्च लाल कागज में लपेटकर भेजने का अर्थ होता था युद्ध के लिए तैय्यार हो जाओ। इसका नमुना भारत में भी देखा जा सकता है। जब किसी की मृत्यु का संदेश कार्ड पर भेजा जाता है तो कार्ड के एक कोने को काट दिया जाता है। कहीं खतरा हो तो लाल कपडा लहराते हैं। नए मकान और वाहन पर निंबू और मिर्च लटकाई जाती है। या काली हंडी में राक्षस का चित्र बना देते हैं। युद्ध में सफेद झंडा फहराना, स्काउटों का हाथ से बात-चीत करना इसी लिपि के अंतर्गत आता है।

निंबू के ऊपर 7 हरी मिर्च

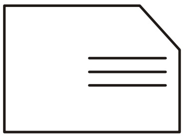

शोक संदेश के लिए कोना कटा पोस्ट कार्ड

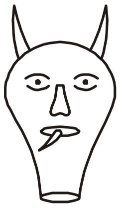

हंडी पर जीभ लपलपाता राक्षस

- **भावमूलक लिपि :**

ऐसी लिपि जो भावों, विचारों तथा वस्तुओं को प्रकट करती है। यह चित्रों पर आधारित रेखात्मक लिपि होती है। यह चित्रलिपि का ही विकसित रूप है। दोनों में अंतर इतना है कि चित्र लिपि में पैर का चित्र पैर की अभिव्यक्ति करता है, किंतु भावमूलक लिपि में वह चलने की क्रिया का द्योतक है। आँखों के साथ ही आँसू चित्रित करने का भाव या दु:खी होना। इस लिपि के अनेक उदाहरण अमेरिका, चीन, उत्तरी अफ्रिका में मिले हैं। इस लिपि के द्वारा बडे-बडे पत्र भी लिखे जाते हैं। इस लिपि के बहुत से चिह्न चीनी लिपि में मौजूद हैं। चित्र लिपि की तुलना भाव-लिपि में अधिक सरल, कम समय लेनेवाली तथा अल्प श्रमसाध्य थी। फिर भी उसकी त्रुटियों से मानव परिचित था। इन्ही त्रुटियों को दूर करने के लिए मनुष्य ने ध्वनिमूलक लिपि का आविष्कार किया।

आजकल बुद्धी परीक्षा के लिए चित्र देकर उस पर कहानी या घटना का विश्लेषण कराना या चित्र कथा लिखना इस प्राचीन लिपी का आधुनिक रूप है। आजकल फोटोग्राफ या रेखाचित्र देकर बच्चों से कहानी लिखवाना इसी लिपि परंपरा का अवशेष है।

- **भाव-ध्वनिमूलक लिपि :**

ऐसी लिपी कुछ बातों में प्रतीकात्मक होती है और कुछ बातों में ध्वनिमूलक। इसमें कुछ चिह्न चित्रात्मक होते हैं। कुछ भावमूलक और कुछ ध्वनिमूलक होते हैं अर्थात् इनमें इन सबका यथासंभव उपयोग होता है। मेसोपोटैमियन, मिस्त्री तथा हिंदी आदि लिपियाँ इसी लिपि के अंतर्गत आती हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सिंधु घाटी की लिपि भी इसी श्रेणी की है।

- **ध्वनिमूलक लिपि :**

इस लिपि में प्रत्येक ध्वनी के लिए एक अक्षर का या चिह्न का संकेत निर्धारित कर लिया जाता है, तथा उसे उसी रूप में उच्चारित करना पड़ता है। इन अक्षरों को क्रम से लगाकर शब्द बनते हैं। शब्दों को व्याकरण के सहयोग से वाक्यों में परिवर्तित किया जाता है। तथा वाक्यों से अर्थ निकले जाते हैं। इस प्रकार की लिपि आधुनिक लिपि है। ध्वनिमूलक लिपि के दो भेद हैं-

अ) अक्षरात्मक लिपि :

इसमें चिह्न किसी अक्षर को व्यक्त करता है, वर्ण को नहीं। नागरी लिपि इसका उदाहरण है। इसके

व्यंजनों में जो ध्वनियाँ होती हैं; यथा, 'क' वर्ण में क्+अ दो वर्ण हैं। इसमें 'क' व्यंजन है और 'अ' स्वर है। यही कारण है कि व्यवहार में उचित होते हुए भी इस लिपि के वैज्ञानिक विश्लेषण में कठिनाई होती है। अरबी, फारसी, बांगला, गुजराती, उडिया, तेलुगू आदि लिपियाँ अक्षरात्मक ही हैं।

ब) वर्णनात्मक :

इसमें ध्वनि की प्रत्येक इकाई के लिए अलग चिह्न होते हैं और उनके आधार पर सरलता से किसी भी भाषा का कोई भी शब्द लिखा जा सकता है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह आदर्श लिपि है। रोमन लिपि इसी प्रकार की है। इसमें 'K' में केवल 'क' ही होता है। इस लिपि का वैज्ञानिक विश्लेषण सरलता से किया जाता है।

इस प्रकार लिपि के विकास क्रम में चित्र लिपि प्रथम अवस्था की लिपि है और वर्णनात्मक ध्वनिमूलक लिपि अंतिम अवस्था की। चित्रात्मक लिपि का विकसित रूप भावमूलक लिपि है और भावमूलक लिपि का विकसित एवं श्रेष्ठ रूप ध्वनिमूलक लिपि है।

4.3.3 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता :

मानव जीवन में भाषा का अत्यंत महत्त्व है। भाषा का वर्णमाला एवं लिपि से घनिष्ठ संबंध है। प्रत्येक भाषा के लिए एक अलग वर्णमाला आवश्यक होती है। डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया के अनुसार ''वर्णमाला का ध्वनियों के सांकेतिक चिह्न-विशेष की ही संज्ञा लिपि है।'' लिपि शब्द 'लिप्यते' से निकला है, जिसके अनेक अर्थ हैं - लिंपन करना, लेप देना आदि। जब मनुष्य की शाब्दिक अभिव्यक्ति को सांकेतिक चिह्नों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए उन चिह्नों में उसका अर्थलीपंन किया जाता है। तब लिपि का जन्म होता है। किसी भी भाषा की समृद्धि में लिपि का योग सर्वाधिक होता है।

देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है। भारतीय संविधान ने इसे राजलिपि, राष्ट्रलिपि के पद पर प्रतिष्ठत किया है। किसी भाषा का ध्वन्यात्मक प्रतिनिधित्व करनेवाली लिपि ही वैज्ञानिक और पूर्ण लिपि कहलाती है। जब हम देवनागरी की तुलना संसार की अन्य लिपियों; रोमन, अरबी आदि से करते हैं, तो पता चल जाता है कि उन लिपियों की अपेक्षा देवनागरी में कुछ ऐसे गुण या विशेषताएँ हैं जिनके फलस्वरूप उसे वैज्ञानिक लिपि कहा जाता है। देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता संबधी विद्वानों ने अपने मत निम्नानुसार व्यक्त किए हैं-

- **विदेशी विद्वान :**

1) **प्रो. मेनियर विलियम्स :** ''सफल रूप से कहा जा सकता है कि देवनागरी अक्षरों से बढ़कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरें नहीं है।''

2) **पिटमैन :** ''संसार में यदि सर्वांश पूर्ण अक्षर हैं, तो देवनागरी के हैं।

3) **ग्राउस :** ''कचहरी के लिए फारसी की यह शैली स्वीकार कर लेने पर विवश होकर नागरी लिपि भी छोड देनी पडेगी, जो एक सर्वोत्तम वैज्ञानिक लिपि है।''

- **भारतीय विद्वान :**

1) **सेठ गोविंद दास :** "हमारी देवनागरी इस देश की ही नहीं, समस्त संसार की लिपियों में से सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है। हमारी लिपि में स्वरों और व्यंजनों का जैसा वैज्ञानिक पृथक्करण है वैसा अन्य लिपियों में नहीं।"

2) **डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी :** "संसार की लिपियों में भारतीय लिपियों की यह विशेषता उल्लेखनीय है कि इसके वर्णक्रम नितांत वैज्ञानिक हैं।"

3) **डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री :** "विश्व की आधुनिक सभी लिपियों में देवनागरी लिपि का स्थान, सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि यह संसार की लिपियों में सबसे अधिक वैज्ञानिक है।"

- **देवनागरी की वैज्ञानिकता :**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है। इसकी वैज्ञानिकता निम्नलिखित विशेषताओं से स्पष्ट होती है :-

1) **अक्षरों का वैज्ञानिक वर्गीकरण :**

देवनागरी की वर्णमाला का क्रम वैज्ञानिक है। जैसे - स्वर पहले वह भी ह्रस्व और दीर्घ क्रम से, बाद में व्यंजन। व्यंजन भी उच्चारण स्थान तथा प्रयत्न के अनुसार कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दंत्य, ओष्ठ्य, आदि रूप में हैं। व्यंजन वर्णमाला में भी पहले दो अघोष व्यंजन (क, ख, च, छ) फिर दो घोष (ग, घ, ज, झ आदि) और पाँचवाँ वर्ण अनुनासिक है। इसी प्रकार 'क' वर्ग आदि पाँचों वर्गों के दूसरा और चौथा वर्ण (ख, घ आदि) महाप्राण हैं और पहला तथा तीसरा (क, ग आदि) अल्पप्राण हैं। वर्णों की ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था विश्व की किसी भी भाषा में नहीं है। रोमन, अरबी लिपियों में 'स्वर' 'व्यंजनों' का अलग-अलग वर्गीकरण नहीं है, तथा उच्चारित ध्वनियों का उच्चारण स्थान के क्रमानुसार वर्गीकरण भी नहीं है, जो देवनागरी मे निम्नप्रकार पाया जाता है -

1) कंठ्य - क, ख, ग, घ, ङ
2) तालव्य - च, छ, ज, झ, ञ
3) मूर्धन्य - ट, ठ, ड, ढ, ण
4) दंत्य - त, थ, द, ध, न
5) ओष्ठ्य - प, फ, ब, भ, म

देवनागरी लिपि के ये वर्ण ध्वनियों के उच्चारण स्थान को ध्यान में रखकर पंक्तिबद्ध बिठाए गए हैं जो ध्वनियाँ क्रमशः कंठ्य से सुरू होकर ओष्ठ तक संपन्न होती हैं।

2) **एक ध्वनि के लिए एक लिपि चिह्न :**

प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र लिपि चिह्न आवश्यक है। देवनागरी में प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र एक-एक लिपि चिह्न है। जबकि संसार की अन्य लिपियों में यह व्यवस्था नहीं है। जैसे रोमन और उर्दू। रोमन में C, Q, K तीन लिपि चिह्न हैं और उच्चारित ध्वनि 'क' एक ही है। उदा. cat = कैट, kite = काइट, Queen = क्वीन। मतलब, रोमन लिपि में 'क' ध्वनि के लिए K, Q, C का प्रयोग होता है। उर्दू लिपि में भी 'स' ध्वनि के लिए तीन लिपि चिह्न हैं - 'से', स्वाद, सीन, इसी प्रकार 'ज' के लिए 'जे' तथा 'जोय'। इस प्रकार एक ध्वनि के लिए अनेक लिपि चिह्न का प्रयोग अवैज्ञानिक है।

3) **गत्यात्मकता एवं व्यावहारिकता :**

देवनागरी लिपि गत्यात्मक एवं व्यावहारिक है। हिंदी भाषा कई अन्य भाषाओं के संपर्क में आनेपर उसे नयी-नयी ध्वनियों की आवश्यकता महसूस हुई। इस आवश्यकता पूर्ति हेतु देवनागरी में नए लिपि चिह्नों का निर्माण किया गया। क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ऑ आदि चिह्न इसके उदाहरण हैं। इसी तरह अन्य कुछ लिपि चिह्नों का निर्माण किया जाए तो देवनागरी लिपि में विश्व की सारी भाषाओं को लिखने की क्षमता पैदा हो सकती है तथा वह अंतर्राष्ट्रीय लिपि बनने की भी क्षमता रख सकती है।

4) **निश्चित उच्चारण :**

देवनागरी लिपि में वर्णों के उच्चारण निश्चित हैं। इसके विपरीत रोमन में लिखा कुछ जाता है, और उसका उच्चारण कुछ अलग ही होता है। (Put) शब्द में 'U' का उच्चारण 'उ' है तो (But) शब्द में 'U' का उच्चारण 'अ' है। इसके विपरीत देवनागरी में प्रत्येक वर्ण की उच्चारित ध्वनि निश्चित होती है।

5) **जैसे लिखा जाए-वैसे बोला जाए :**

देवनागरी में जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है वही बोला जाता है। अर्थात देवनागरी लिपि में प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होता है। जबकि रोमन में बहुत से वर्ण हैं। जिनका उच्चारण नहीं होता जैसे - Knowledge का उच्चारण नॉलेज होता है, इसमें KWD आदि वर्णों का उच्चारण नहीं होता; उसी प्रकार Night, Half आदि शब्दों के उच्चारण ऐसे ही हैं।

6) **ह्रस्व और दीर्घ की स्पष्टता :**

यह नागरी की निजी विशेषता है। इसमें ह्रस्व 'इ' और दीर्घ 'ई' में स्पष्ट भेद है। पर अंग्रेजी में दोनों ध्वनियों के लिए आई (I) से ही काम चल जाता है। जैसे (Nib) निब में 'i' ऱ्हस्व है और Machine में (i) दीर्घ है।

7) **छोटे-बडे की उलझन नहीं :**

नागरी लिपि में रोमन वर्णों के समान छोटे-बडे अर्थात कैपिटल - स्मॉल वर्णों की अलग-अलग

उलझन नहीं; जैसे, A/a B/b आदि।

8) कलात्मकता, सुंदरता एवं सुगठितता :

नागरी लिपि के वर्ण अत्यंत कलात्मक, सुंदर एवं सुगठित ढंग से लिखे जाते हैं। इस लिपि में लिखित शब्द अपेक्षाकृत कम स्थान घेरते हैं। जैसे देवनागरी में 'महेश्वर' की अपेक्षा अंग्रेजी में लिखित 'Maheshwara' शब्द अधिक स्थान घेरता है।

9) स्वर और व्यंजन का योग :

देवनागरी लिपि को प्रत्येक व्यंजन में स्वर का योग है जैसे क= क+अ, ब = ब+अ आदि। अन्य लिपियों में इसप्रकार का योग देखने नहीं मिलता।

10) व्यापक क्षेत्र :

देवनागरी लिपि देश के बहुत बडे क्षेत्र में प्रयुक्त हुई है। इसका प्रयोग हिमालय से लेकर महाराष्ट्र तक हरियाणा से बिहार तक है।

इस प्रकार यहाँ देवनागरी लिपि की दस विशेषताएँ प्रस्तुत हैं तथापि कुछ विद्वानों ने इसकी अक्षरात्मकता, वर्णमाला की पूर्णता, लेखन-मुद्रण की एकरूपता, अद्र्ध अक्षर रूपों की सुगमता आदि कुछ और विशेषताओं का उल्लेख किया है जिनके आशय उपरोक्त विशेषताओं में समाहित हैं।

4.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न.

अ) निम्नलिखित वाक्यों में दिए गए पर्यायों में से सही पर्याय चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1) .... यह बोली पश्चिमी हिंदी इस उपभाषा से निकली है।

क) जयपुरी ख) ब्रज ग) अवधी घ) बघेली

2) हिंदी की पांच उपभाषाओं से .... बोलियाँ निकलती हैं।

क) 15 ख) 17 ग) 20 घ) 22

3) पश्चिमी हिंदी से .... बोलियाँ निकलती हैं।

क) 3 ख) 8 ग) 10 घ) 5

4) शौरसेनी अपभ्रंष के मध्यवर्ती रुप से .... इस बोली का विकास हुआ है।

क) अवधी ख) बघेली ग) ब्रज घ) भोजपुरी

5) खडीबोली का एक अन्य नाम .... है।

क) मेवाती ख) मालवी ग) मगही घ) कौरवी

6) प्राचीन काल में भोजपुरी .... जनपद की राजधानी थी।

क) मल्ल ख) भल्ल ग) हल्ल घ) पल्ल

7) ध्वनियों को .... में व्यक्त करने की कला ही लिपि कहलाती है।

क) रेखाओं ख) ध्वनियों ग) स्वरों घ) भावों

8) 'लिपि' शब्द संस्कृत के .... धातु से बना है।

क) विप ख) रिप ग) लिप घ) डिप

9) चित्र के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति .... लिपि के नाम से अभिहित होती है।

क) चित्र ख) सूत्र ग) भाव घ) भावमूलक

10) स्मरण के लिए आज भी लोग रुमाल, पल्लू में .... बांधते हैं।

क) खांट ख) गांठ ग) माठ घ) ठाठ

आ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए।

1) भोजपुरी यह बोली किस उपभाषा से निकली है?
2) हिंदी भाषा की कितनी उपभाषाएँ हैं?
3) अवध का प्राचीन नाम क्या था ?
4) भोजपुर नगर का नाम किस राजा के नाम के आधार पर बना है?
5) तिब्बत-चीनी सीमा पर मुर्गे के बच्चे का कलेजा भेजने का क्या अर्थ था ?
6) प्रतीकात्मक लिपि में कार्ड का कोना काटना क्या दर्शाता है?
7) भारतीय संविधान ने देवनागरी लिपि को किस पद पर प्रतिष्ठित किया है ?
8) उर्दू में 'स' ध्वनि के लिए कितने लिपि चिह्न हैं?
9) दंत्य व्यंजन कौनसे हैं ?
10) देवनागरी लिपि के वर्णों को किन दो वर्गों में विभाजित किया गया है ?

4.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ ।

1) दीर्घ - वह वर्ण जिसका उच्चारण खींचकर हो - जैसे 'अ' का दीर्घ 'आ'
2) कंठ्य - वह वर्ण जिसका उच्चारण कंठ से होता है। क, ख, ग, घ
3) तालव्य - तालू से उच्चारण किया जानेवाला - च, छ, ज

4) मूर्धन्य - वह वर्ण जिसका उच्चारण मूर्धे की सहायता से होता है - ट, ठ, ड

5) दंत्य - दातों की सहायता से उच्चारण किया जानेवाला।

6) ओष्ठ्य - जिनका उच्चारण ओंठो से हो।

7) अघोष - अल्पध्वनियुक्त।

8) अल्पप्राण - व्यंजन के प्रत्येक वर्ग का पहला, तीसरा तथा पाँचवा अक्षर।

9) महाप्राण - वह वर्ण जिसके उच्चारण में प्राणवायु का विशेष प्रयोग हो।

10) अनुनासिक - नासिक विवर की मदद से मुखोच्चरित ध्वनि (अक्षर) न, म

4.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर :

अ) 1) ब्रज 2) 17 3) 5

4) ब्रज 5) कौरवी 6) मल्ल

7) रेखाओं 8) लिप 9) सूत्र

10) गांठ

आ) 1) भोजपुरी यह बोली बिहारी हिंदी नामक उपभाषा से निकली है।

2) हिंदी भाषा की पांच उपभाषाएँ हैं।

3) अवध का प्राचीन नाम कोसला था।

4) भोजपुर नगर का नाम राज भोज के नाम पर रखा गया है।

5) मुर्गे के बच्चे का कलेजा भेजने का अर्थ - युद्ध के लिए तैय्यार हो जाओ।

6) प्रतीकात्मक लिपि में कार्ड का कोना काटना किसी की मृत्यु के समाचार को दर्शाता है।

7) भारतीय संविधान ने देवनागरी को राजलिपि, राष्ट्रलिपि के पद पर प्रतिष्ठित किया है।

8) उर्दू में 'स' ध्वनि के लिए तीन लिपि चिह्न हैं - से, स्वर, सीन।

9) त, थ, द, ध न दंत्य व्यंजन हैं।

10) देवनागरी लिपि के वर्णों को स्वर और व्यंजन इन दो वर्गों में विभाजित किया गया है।

4.7 सारांश :

1) बोलियों की दृष्टि से हिंदी भाषा का विशेष महत्त्व है। संख्या के संदर्भ में विद्वानों में मतभेद जरूर हैं, लेकिन फिर भी कुल मिलाकर हिंदी भाषा के पांच बोली वर्ग हैं। इन पांच बोली वर्ग में कुल सत्रह बोलियों का समावेश है।

2) लिपि के विकास क्रम में चित्र लिपि, सूत्र लिपि, प्रतीकात्मक लिपि, भावमूलक लिपि, भाव ध्वनिमूलक लिपि, ध्वनिमूलक लिपि अत्यंत महत्त्वपूर्ण लिपियाँ हैं।

3) देवनागरी लिपि भारत की प्रमुख लिपि है। भारतीय संविधान ने इसे राजलिपि के पद पर प्रतिष्ठित किया है। देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है, क्योंकि इसमें संसार की लगभग सभी भाषाओं की ध्वनियों को उच्चारित एवं प्रतिनिधित्व करनेवाले चिह्न मौजुद हैं। देवनागरी की अपनी कुछ खास विशेषताएँ हैं जो उसकी वैज्ञानिकता सिद्ध करती हैं।

4.8 स्वाध्याय :

अ) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

1) बोलियों का विवेचनात्मक परिचय दीजिए।

2) हिंदी की सत्रह बोलियों का परिचय दीजिए।

3) लिपि के विकासक्रम का परिचय दीजिए।

4) देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को स्पष्ट कीजिए।

आ) टिप्पणियाँ लिखिए :

1) अवधी। 2) ब्रजभाषा। 3) खड़ीबोली।
4) भोजपुरी। 5) दक्खिनी हिंदी। 6) लिपिविकास।
7) चित्रलिपी। 8) सूत्रलिपी। 9) भावमूलक लिपि।
10) भावध्वनिमूलक लिपि। 11) देवनागरी लिपी की वैज्ञानिकता।

4.9 क्षेत्रीय कार्य :

1) अपने गांव में बोली जानेवाली बोलियों का अध्ययन कीजिए।

2) चित्र लिपि, सूत्र लिपि और प्रतीकात्मक लिपि का सचित्र विश्लेषण कीजिए।

3) देवनागरी लिपि एवं रोमन लिपि का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

4.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए किताबें।

1) भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा - डॉ. सुधाकर कलावडे

2) भाषा और भाषाविज्ञान - तेजपाल चौधरी

3) भाषाविज्ञान एवं हिंदी भाषा - डॉ. लक्ष्मीकांत पाण्डेय, डॉ. प्रमिला अवस्थी

• • •